वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 367
ISBN-978-93-82071-47-1

अकृत्रिम जिनमंदिर रचना

(आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती-श्रीयतिवृषभाचार्य-श्रीपद्मनंदि आचार्य श्री सिंहसूरर्षि-श्री सकलकीर्ति आचार्य विरचित ग्रंथों से उद्धृत)

–संकलनकर्त्री–

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी,
दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

शरदपूर्णिमा महोत्सव-2012, पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के 61वें त्यागदिवस के अवसर पर घोषित चारित्रवर्धनोत्सव वर्ष 2012-2013 के अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org, E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

प्रथम संस्करण	वीर नि. सं. 2539	मूल्य
1100 प्रतियाँ	15 फरवरी 2013, बसंत पंचमी	24/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

वर्तमान में इस भौतिकवादी युग में आज के आधुनिक परिवेश में जीवन व्यतीत करने वाले मानव के पास इतनी व्यस्तता रहती है कि उसे अपने आत्मकल्याण के लिए, अपने लिए सोचने का समय ही नहीं मिलता है। फिर भी यदि हम उस प्रतिस्पर्धा की जीवन शैली से कुछ समय निकालकर यदि मानव जीवन का सदुपयोग करते हैं तो हमें कुछ देर के लिए शांति व आनन्द का अनुभव होता है। संतों के सानिध्य में जाकर कुछ समय में ही आत्मोन्नति का मार्ग प्रशस्त होता है। हमें अपने श्रावक धर्म के कर्तव्यों का पालन करते हुए कुछ समय सत्साहित्य के स्वाध्याय में अवश्य लगाना चाहिए। क्योंकि स्वाध्याय भी बाह्य तप की श्रेणी में आता है। जैसा कि कहा गया है–'स्वाध्यायः परमं तपः' ! जैन धर्म में अनेकानेक प्राचीन ग्रंथों का भण्डार भरा पड़ा है। जिनके सम्पूर्ण स्वाध्याय का हम रसास्वादन नहीं कर पाते। लेकिन पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी जैसी चारों अनुयोगों का तलस्पर्शी ज्ञान रखने वाली महान् साध्वी की कृपा से हम नए-नए आगमप्रणीत विषयों का संक्षेप में ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं। उन्हीं में से आपके हाथों में एक नई कृति "अकृत्रिम जिनमंदिर रचना" नामक पुस्तक पहुँचाने का सुअवसर प्राप्त हो रहा है। इसका स्वाध्याय कर आपके ज्ञानावरण-कर्म का क्षयोपशम हो और ज्ञान का वर्धन हो यही मंगल भावना है।

विषयानुक्रमणिका

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ संख्या
१.	अकृत्रिम जिनालय वंदना	१
२.	अकृत्रिम जिनमंदिर रचना	७
३.	नन्दीश्वर द्वीप के जिनमंदिर	८
४.	पाण्डुकवन के जिनमंदिर	२६
५.	भवनवासी देवों के भवनों में चैत्यवृक्ष एवं जिनमंदिर	३८
६.	मंदरपर्वत के जिनमंदिर	४३
७.	मेरु के जिनमंदिर	६०
८.	भद्रशालवन के जिनमंदिर	६६

प्रस्तावना

– आर्यिका सुदृढ़मती (संघस्थ)

त्रिभुवन के जितने चैत्यालय, अकृत्रिम उनको नित वंदूं।
भव-भव के संचित पापपुंज, उन सबको इकक्षण में खंडूं।।

पू. गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने उक्त पंक्तियाँ "अकृत्रिम चैत्यालय वंदना" में संजोई हैं तथा बताया है कि इन जिनालयों को नमस्कार करने से जन्म-जन्म के संचित पाप भी एक क्षण में नष्ट हो जाते हैं। ऐसी इन अकृत्रिम जिनमंदिरों की महिमा है। हमारे जैन आगम में ४ अनुयोगों में द्वादशांग को निबध्द किया गया है–प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग और द्रव्यानुयोग। इनमें से करणानुयोग के अंतर्गत तीन लोक में स्थित अधोलोक, मध्यलोक, ऊर्ध्वलोक का वर्णन तथा इनमें स्थित अकृत्रिम जिनालयों की रचना का भी विस्तार से उल्लेख मिलता है। अकृत्रिम जिनालय अर्थात् अनादिनिधन, शाश्वत जिनमंदिर जिन्हें किसी ने नहीं बनाया है, जिनका न तो आदि है न अंत, जो सदैव विद्यमान रहते हैं और भव्य जीवों के लिए सम्यग्दर्शन की प्राप्ति कराकर मोक्ष का मार्ग प्रशस्त करने वाले हैं। कृत्रिम जिनालय — जिनका किसी के द्वारा निर्माण कराया जाता है और जो काल के साथ विलीन हो जाते हैं। पू. गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने करणानुयोग के ग्रंथों का अनेक बार स्वाध्याय किया है उन्हीं में से त्रिलोकसार, तिलोयपण्णत्ति, जंबूद्वीप पण्णत्ति, लोकविभाग और सिद्धान्तसार दीपक इन ५ प्राचीन आगमग्रंथों से इस महत्त्वपूर्ण विषय को लेकर हम सबके ज्ञानवर्धन के लिए इस लघु पुस्तक की रचना की है। जिसके स्वाध्याय के माध्यम से हम भी उन अलौकिक अकृत्रिम जिनभवनों के वैभव का दर्शन परोक्ष में करके असीम पुण्य का संचय कर सकते हैं।

त्रिलोकसार ग्रंथ में कहा है — इन अकृत्रिम जिनालयों की रचना उत्कृष्ट, मध्यम व जघन्य तीन प्रकार की हैं, जिनका आयाम आदि (लम्बाई, चौड़ाई, ऊँचाई) योजनों से बताया गया है। गाथा नं, ९८४, ९८५, ९८६ में इनका वर्णन करते हुए कहा है–जिनके प्रत्येक जिनालय में बीचों-बीच १०८ गर्भगृह में १०८ स्वर्णमय सिंहासनों पर विभिन्न रत्नों, मणियों से निर्मित १०८ जिनप्रतिमाएँ विराजमान होती हैं। जिनमें सर्वांग सुन्दर दशताल प्रमाण ५०० धनुष ऊँची प्रतिमाएँ विराजमान हैं। उपर्युक्त वर्णित प्रत्येक ग्रंथ में इन जिनभवनों को 'त्रिभुवनतिलक जिनमंदिर' की संज्ञा दी गई है।

तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ में कहा है–

संखेंदुकुंदधवलो मणिकिरणकलप्पणासियतमोघो।
जिणवईपासादवरो 'तिहुवणतिलओ' त्ति णामेण।।१८५९।।

अर्थात् शंख, चन्द्रमा अथवा कुंदपुष्प के समान धवल और मणियों के किरण-कलाप से अंधकार समूह को नष्ट करने वाले यह उत्तम जिनेन्द्रप्रासाद 'त्रिभुवनतिलक' नाम से विख्यात हैं।

और भी कहा है–

सिरिदेवीसुददेवीसव्वाणसणक्कुमारजक्खाणं ।
रूवाणि अट्ठमंगल देवच्छंदम्मि जिणणिकेदेसुं।।४८।।

जिनमंदिरों में देवच्छंद के भीतर श्रीदेवी, श्रुतदेवी तथा सर्वाण्ह और सनत्कुमार यक्षों की मूर्तियाँ एवं आठ मंगलद्रव्य होते हैं।

इन जिनभवनों के परकोटे में मणिमय खंभों के ऊपर सिंह, गज, हंस, वृषभ, कमल, मयूर, मकर, चक्र, आतपत्र और गरुड़ इन १० प्रकार के चिह्नों से सहित ध्वजाओं के समूह लहराते हैं। जिनमें प्रत्येक की १०८-१०८ क्षुद्रध्वजाएँ भी होती हैं। इन जिनालयों के आभ्यंतर भाग में नाना प्रकार की मणियों, रत्नों से निर्मित अत्यंत दैदीप्यमान हजारों मालाएँ लटकती रहती हैं, हजारों सुगंधित धूपघट व स्वर्णकलश शोभायमान रहते हैं। इन अनुपम, अतुलनीय, त्रैलोक्यपूज्य अकृत्रिम जिनालयों का वर्णन करने में बड़े-बड़े आचार्यों ने भी अपनी लघुता प्रदर्शित की है। हम इन तीनों लोकों में स्थित ८ करोड़ ५६ लाख ९७ हजार ४८१ अकृत्रिम जिनालयों को तथा इनमें विराजमान ९२५ करोड़ ५३ लाख २७ हजार ९४८ अकृत्रिम जिन प्रतिमाओं को मन, वचन, काय से कोटि-कोटि नमन करते हुए शीघ्र ही मोक्ष प्राप्ति की कामना करते हैं। पू. गणिनीप्रमुख, वाग्देवी, सरस्वती स्वरूपा श्री ज्ञानमती माताजी के चरणों में भी बारम्बार वंदामि करते हैं जिन्होंने करणानुयोग ग्रंथों से इस अछूते, अद्वितीय विषय को जनमानस के लिए प्रदान कर सुलभता से कम समय में इसके स्वाध्याय का अवसर दिया है। पूज्य माताजी की कृपा से मुझे भी इस पुस्तक के मैटर की प्रूफ रीडिंग के माध्यम से पूरे विषय के अध्ययन का सुयोग प्राप्त हुआ जिससे मन में बड़ा आल्हाद हुआ। जिससे कर्मों की निर्जरा होकर पुण्य का बंध हुआ। पुनः-पुनः पूज्य माताजी के चरणों में वंदामि।

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान—टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि—आसोज सुदी १५ (शरदपूर्णिमा) वि. सं. १९९१, (२२ अक्टूबर सन् १९३४)

जाति—अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र**—गोयल, **नाम**—कु. मैना

माता-पिता—श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत—ई. सन् १९५२, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा—चैत्र कृ. १, ई. सन् १९५३ को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम—क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा—वैशाख कृ. २, ई. सन् १९५६ को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती १०८ आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व—अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग ३०० ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि—सन् १९९५ में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा ८ अप्रैल २०१२ को "डी.लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा—हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा—भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ परतीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की ३१-३१ फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन १०८ फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की शिाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर, शिर्डी में ज्ञानतीर्थ इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा—पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। **विशेषरूप से २१ दिसम्बर २००८ को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।**

शैक्षणिक प्रेरणा—'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा—जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (१९८२ से १९८५), समवसरण श्रीविहार (१९९८ से २००२), महावीर ज्योति (२००३-२००४) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

—जीवन प्रकाश जैन (प्रबंध सम्पादक)

ईसवी सन् १९७२ में पूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से स्थापित उक्त संस्था के द्वारा जम्बूद्वीप रचना के निर्माण हेतु मेरठ (उ.प्र.) के ऐतिहासिक तीर्थ हस्तिनापुर में नशिया मार्ग पर जुलाई १९७४ में एक भूमि क्रय की गई, जहाँ सर्वप्रथम २४वें तीर्थंकर भगवान महावीर स्वामी की अवगाहना प्रमाण सात हाथ (सवा दस फुट) ऊँची खड्गासन प्रतिमा विराजमान करने हेतु फरवरी १९७५ में एक लघुकाय जिनालय का निर्माण किया गया, जो सन् १९९० में एक अनोखे 'कमल मंदिर' के रूप में निर्मित हुआ है। यहाँ विराजमान कल्पवृक्ष भगवान महावीर से यह अतिशय क्षेत्र निरंतर प्रगति पथ पर अग्रसर होता हुआ नित्य नये निर्माणों के द्वारा संसार में अद्वितीय पर्यटन स्थल के रूप में प्रसिद्ध हुआ है। इस प्रतिमा के दर्शन करके भक्तगण अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण करते हैं।

जम्बूद्वीप निर्माण का प्रथम चरण — जुलाई सन् १९७४ में रखी गई नींव के आधार पर जम्बूद्वीप के बीचोंबीच में सर्वप्रथम आगम वर्णित सुमेरुपर्वत (१०१ फुट ऊँचा) का निर्माण अप्रैल सन् १९७९ में एवं सन् १९८५ में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण पूर्ण हुआ। सोलह जिनमंदिरों से समन्वित उस सुमेरुपर्वत के अंदर से निर्मित १३६ सीढ़ियों से चढ़कर श्रद्धालु भक्त समस्त भगवन्तों के दर्शन करके जब सबसे ऊपर पाण्डुकशिला के निकट पहुँचते हैं, तो नीचे जम्बूद्वीप रचना के सभी नदी, पर्वत, मंदिर, उपवन आदि दृश्यों के साथ-साथ हस्तिनापुर के आसपास के सुदूरवर्ती ग्रामों का भी प्राकृतिक सौंदर्य देखकर फूले नहीं समाते हैं।

यात्री सुविधा — हस्तिनापुर तीर्थ में जम्बूद्वीप स्थल के पूरे परिसर में संस्थान द्वारा कार्यालय का सक्रिय संचालन किया जाता है। वहाँ यात्रियों के ठहरने हेतु आधुनिक सुविधायुक्त २०० कमरे, ५० से अधिक डीलक्स फ्लैट एवं अनेकों गेस्ट हाउस (बंगले) बने हुए हैं। इसके साथ ही यहाँ सुन्दर भोजनालय है जहाँ यात्रियों को सुविधापूर्वक शुद्ध भोजन प्राप्त होता है। इसके अतिरिक्त २ किमी. दूर हस्तिनापुर सेन्ट्रल टाउन में सरकारी अस्पताल, डाकखाना, बाजार, इंटरकालेज तथा अन्य शिक्षण संस्थाएँ आदि सभी आवश्यक सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

हस्तिनापुर कैसे पहुँचे ? — भारत की राजधानी दिल्ली से ११० किमी. पश्चिमी उत्तरप्रदेश में जिला-मेरठ से ४० किमी. दूर हस्तिनापुर तीर्थ है। राजधानी दिल्ली से हस्तिनापुर के लिए अंतर्राज्यी बस अड्डे अथवा आनंद विहार बस अड्डे से उत्तरप्रदेश रोडवेज तथा डी.टी.सी. बसों की निरंतर सेवा उपलब्ध है। मेरठ से भी प्रति आधे घंटे के अंतराल से जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर पहुँचने हेतु रोडवेज की बसें सुलभता के साथ उपलब्ध रहती हैं। 'जम्बूद्वीप' के नाम से ये बसें चलती हैं जो सीधे जम्बूद्वीप के सामने ही रुकती हैं और जम्बूद्वीप से ही मेरठ, दिल्ली, तिजारा आदि यात्रा हेतु बसें उपलब्ध रहती हैं। दिल्ली और मेरठ के बीच रेल सेवा भी है। देश-विदेश के यात्रीगण हस्तिनापुर पधारकर इस धरती का स्वर्ग मानी जाने वाली 'जम्बूद्वीप रचना' के दर्शन करें और मानसिक शांति का अनुभव करते हुए मनवांछित फल प्राप्त करें, यही मंगलकामना है।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

१. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, रोहतक।
२. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
३. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-१९, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
४. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
५. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
६. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
७. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-९२।
८. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
९. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
१०. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
११. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
१२. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-९२।
१३. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
१४. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
१५. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
१६. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
१७. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-४, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कॅनाटप्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

१. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
२. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, ७९२ विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
३. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
४. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
५. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
६. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
७. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
८. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
९. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
१०. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
११. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
१२. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
१३. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
१४. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
१५. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-७।
१६. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
१७. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
१८. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
१९. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)
२०. श्रीमती शशि जैन ध.प. श्री दिनेशचंद जैन, शिवालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
२१. श्रीमती आदर्श जैन ध.प. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमार जैन, मेरठ।
२२. श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन 'शीशे वाले', इलाहाबाद (उ.प्र.)।

अकृत्रिम जिनमंदिर रचना

अकृत्रिम जिनालय वंदना

-गणिनी ज्ञानमती

(चाल-हे दीनबन्धु.....)

जैवंत मूर्तिमंत जिनालय महान हैं।
जैवंत आदि अंत[1] शून्य गुण निधान हैं।।
जैवंत तेज में अपूर्व सूर्यकान्त हैं।
जैवंत शांतिसिंधु रूप चंद्रकान्त हैं।।१।।

जैवंत पंचमेरु के अस्सी जिनालया।
जैवंत नागदंत बीस जैन आलया।।
जैवंत जंबू आदि वृक्ष दश के जिनगृहा।
जैवंत हों वक्षारगिरि के अस्सि जिनगृहा।।२।।

जै रूप्यगिरी एक सौ सत्तर के जिनगृहा।
जै कुलगिरी हैं तीस के शुभ तीस जिनगृहा।।
जै चार इष्वाकार के जिनगेह चार हैं।
जै मानुषोत्तराद्रि के जिनवेश्म चार हैं।।३।।

1. अनादि अनंत।

जै ढाई द्वीप के ये जिनालय सुशासते।
जै आठवें सुद्वीप नंदीश्वर के भासते।।
जै चार अंजनाद्रि सोल[1] दधिमुखाद्रि हैं।
जै रतिकरे बत्तीस भी जिनगेह अद्रि हैं।।४।।

जैवंत ये बावन जिनेन्द्रगेह गिरी पे।
जै ग्यारवें सुद्वीप में कुंडलगिरी दिपे।।
जै तेरवें सुद्वीप में रुचकाद्रि सुराजे।
जै दोनों पे सुचार चार भवन विराजे।।५।।

जैवंत चार शतक अठावन जिनालया।
जैवंत मुक्तिवल्लभा के कंत आलया।।
जैवंत जैनधाम की महिमा अपार है।
जै इनको वंदना हमारी बारबार है।।६।।

उत्तम प्रमाण जिनगृहों का क्रम से बताया।
सौ योजनों लंबाई का प्रमाण है गाया।।
योजन पचास चौड़े हैं ये शास्त्र[2] में कहा।
ऊँचे पचीस न्यून शतक योजनों रहा।।७।।

मेरू के भद्रसाल औ नंदन वनों के जो।
वर द्वीप नंदीश्वर के हैं बावन्न भवन जो।।
उत्कृष्ट ये इनका प्रमाण जानिये सदा।
इन जैनगृहों को हमारी वंदना मुदा।।८।।

मध्यम प्रमाण योजनों लंबे पचास के।
ऊँचे हैं साढ़े सैंतिस चौड़े पचीस के।।
वन सौमनस रुचकाद्रि औ कुंडलगिरी पे जो।
वक्षार इष्वाकार तथा कुलगिरी पे जो।।९।।

मनुजोत्तराद्रि पर भी कहे जैनधाम हैं।
मध्यम प्रमाण मान्य को मेरा प्रणाम है।।

1. सोलह। 2. त्रिलोकसार के आधार से जिनालयों का वर्णन यहाँ किया गया है।

मंदिर जघन्य मान हैं पांडुक उद्यान के।
मध्यम से अर्ध मानिये योजन सुजान के।।१०।।

रूपाद्रि जंबू शाल्मली धातकी[1] आदी।
आयाम एक कोस है योजन ये अनादी।।
चौड़ाई अर्ध कोस पौन कोश ऊंचाई।
जिन आलयों को नित्य नमूँ शीश नमाई।।११।।

प्रत्येक जिनालय को बेढ़[2] तीन शाल हैं।
प्रत्येक कोट चार दिश में चार द्वार हैं।।
बीथी प्रतेक मानस्तंभ एक एक हैं।
प्रत्येक बीथियों में भी नव नव स्तूप हैं।।१२।।

मणिकोट प्रथम अंतराल में वनी कही।
द्वितीय कोट अंतराल में ध्वजायें ही।।
तृतीय कोट बीच चैत्यभूमि कही हैं।
सिद्धार्थवृक्ष चैत्यवृक्ष युक्त मही हैं।।१३।।

प्रतिसद्म[3] गर्भगेह कहे इक सौ आठ हैं।
प्रत्येक भवन भव्य तो मंडप सनाथ हैं।।
इन गर्भगेह मध्य सिंह पीठ सुराजें।
तिनमें जिनेन्द्रबिंब एक एक विराजें।।१४।।

जिनमूर्तियों की वर्णना अद्भुत अपूर्व है।
वैडूर्य केश वज्रमयीदंत पूर्ण हैं।।
मूंगे समान ओष्ठ जैनबिंब के कहे।
कोंपल समान हाथ पैर तल विशेष हैं।।१५।।

दशताल प्रमित लक्षणों से पूर्ण कहे हैं।
प्रत्यक्ष मानों देख रहे बोल रहे हैं।।
ये बिंब पांचशतक धनुष तुंग कहे हैं।
पद्मासनों से आसनों से राज रहे हैं।१६।।

बत्तीसयुगल यक्ष चंवर ढोर रहे हैं।
एकेक गर्भगृह में सभी यक्ष कहे हैं।।

1. धातकी वृक्ष। 2.वेष्टित करके। 3. प्रत्येक जिनमंदिर।

जिनपास में श्रीदेवी औ श्रुतदेवी कही हैं।
सर्वाण्ह औ सानत्कुमार यक्ष सही हैं।।१७।।

इन देवि और यक्ष की हैं मूर्ति शासती[1]।
जिनमूर्तियों के पार्श्वभाग में हैं राजती।।
हैं आठ महामंगलीक द्रव्य बताये।
प्रत्येक वसू द्रव्य इक सौ आठ हैं गाये।।१८।।

भृंगार कलश वीजना दर्पण ध्वजा चंवर।
ठोना सुछत्र ये हैं आठ मंगलीक वर।।
स्वर्णादि पुष्पयुक्त देवछंद के आगे।
बत्तिस हजार स्वर्णमयी कलश सुराजें।।१९।।

प्रधान द्वार दोनों पार्श्व भाग में गाये।
चौबिस हजार ज्वलित धूपघट हैं बताये।।
मालायें आठ सहस कहीं श्रेष्ठ मणिमयी।
चौबिस हजार मध्य में माला कनकमयी।।२०।।

मुखमंडपों में हेमघट सोलह हजार हैं।
मालायें धूपघट भी तो सोलह हजार हैं।।
मणियों की मोतियों की बनीं क्षुद्र किंकणी।
इन किंकणी से युक्त मधुर घंटिका ध्वनी।।२१।।

मंदिर के पूर्व द्वार की यह वर्णना कही।
दक्षिण तथा उत्तर में छोटे द्वार हैं सही।।
मालादि का प्रमाण अर्ध जानिये वहाँ।
मंदिर के पृष्ठ भाग में भी आइये तहाँ।।२२।।

मालायें आठ सहस जो मणिमय लटक रहीं।
चौबिस हजार स्वर्ण की मालायें भी कहीं।।
मुखमंडपों के अग्र प्रेक्षामंडपादि हैं।
औ वन्दना अभिषेक के मंडप अनादि हैं।।२३।।

क्रीड़ाभवन संगीतभवन गुणन[2] गृहादी।
नर्तनभवन विशाल चित्रभवन अनादी।।

1.अनादिनिधन। 2. शास्त्राभ्यासगृह।

मणिपीठ पे स्तूप वहां पद्मवेदियाँ।
प्रत्येक चार द्वार युक्त बार[1] वेदियाँ।।२४।।

इन रत्न के स्तूप में जिनबिम्ब विराजें।
अब और भी रचना सुनो स्तूप के आगे।।
मणिपीठ के मणिमय त्रिकोट युक्त बताये।
सिद्धार्थ वृक्ष चैत्यवृक्ष नाम हैं गाये।।२५।।

इन वृक्ष के स्कंध चार योजनों लंबे।
योजन सु एक चौड़े, मानों रत्न के खंभे।।
योजन द्विदश[2] की लंबि चार महाशाख हैं।
बहुतेक शाखायें लघू भूकाय सार्थ हैं।।२६।।

योजन द्विदश विस्तार उपरि भाग वृक्ष का ।
फल फूल पत्र कोंपलादि रत्न निर्मिता।।
परिवार वृक्ष इनके बार वेदियों में हैं।
चालिस हजार इक सौ बीस एक लाख हैं।।२७।।

सिद्धार्थतरु की पीठ पे हैं सिद्ध मूर्तियां।
सुचैत्यवृक्ष पीठ पे अरिहंत मूर्तियां।।
चउ दिश में चार चार ये विराजमान हैं।
प्रतिमा के अग्र भाग में बहुध्वज महान हैं।।२८।।

प्रत्येक जिनभवन की चउ दिशाओं में कहीं।
जिनमें हैं चिन्ह दश प्रकार के कहे सही।।
मृगेन्द्र हस्ति वृषभ गरुड़ मोर शशि रवी।
वह हंस कमल चक्र चिन्ह भाषते कवी।।२९।।

प्रत्येक चिन्ह की ध्वजायें इक सौ आठ हैं।
ध्वज मुख्य इन प्रत्येक की फिर इक सौ आठ हैं।।
सब मुख्य और क्षुद्र ध्वजा चार लाख हैं।
सत्तर हजार आठ सौ अस्सी प्रमाण हैं।।३०।।

इन ध्वज के स्वर्ण खंभ सोल योजनों ऊंचे।
इक कोस चौड़े इनके अग्र रत्न के दीखें।।

1.बारह। 2. द्वादश

नानावरण के रत्न ध्वजा रूप परिणमें।
वायू से हिलें मृदुल वस्त्ररूप परिणमें।।३१।।

ध्वजपीठ के आगे भवन में चार द्रह[1] कहें।
इनके उभय में मणिमयी प्रसाद दो रहें।।
प्रसाद के आगे कहे तोरण सुमणिमयी।
स्त्रज[2] घंटिका सहित जिनेन्द्रबिंब मणिमयी।।३२।।

पहले सुकोट अंतराल चार वन कहें।
अशोक सप्तपत्र चंप आम्र के रहें।।
उन वन में दश प्रकार कल्पवृक्ष हैं गाये।
प्रत्येक वन के मध्य चैत्यवृक्ष बताये।।३३।।

वन भूमि निकट चौथि बीथि मध्य भाग में।
जिनबिंब मानथंभ के हैं अग्रभाग में।।
ये मानथंभ धर्म विभव युक्त कहे हैं।
भव्यों के मान हानने में ख्यात रहे हैं।।३४।।

इत्यादि अतुल वर्णना को कौन कह सके।
शाश्वत जिनालयों का विभव कौन कह सके।।
गणधर भी आपको सदा असमर्थ मानते।
हैं चार ज्ञानधारी फिर भी हार मानते।।३५।।

माँ भारती असंख्य जिह्वा धार यदि कहे।
तो भी विभूति जिनगृहों की पार ना लहे।।
मैं अज्ञमती फिर भला क्या वर्णना करूँ।
तुम भक्ति के वश बार बार वंदना करूँ।।३६।।

हे नाथ! दीन जान दया दान दीजिये।
संपूर्ण भव व्यथा को शीघ्र हान कीजिये।।
निज पास में ही नाथ! अब स्थान दीजिये।
कैवल्य ''ज्ञानमती'' का ही दान दीजिये।।३७।।

–दोहा–

तुम गुण गणमणिमालिका, धरे कंठ जो नित्य।
सो जन मनवांछित लहे, वरे अंगना सिद्ध।।३८।।

।।समाप्त।।

1. सरोवर । 2. माला ।

अकृत्रिम जिनमंदिर रचना

-गणिनी ज्ञानमती

श्रीमत्पवित्रमकलंकमनन्तकल्पम्। स्वायंभुवं सकलमंगलमादितीर्थम्।।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्। त्रैलोक्यभूषणमहं शरणं प्रपद्ये।।१।।

अकृत्रिम-अनादिनिधन-शाश्वत जिनमंदिर तीनों लोकों के असंख्यात हैं। उन मंदिरों की रचना कैसी है ? वे मंदिर बड़े से बड़े कितने बड़े हैं और छोटे से भी छोटे कितने छोटे हैं ? इसे ही आप इस पुस्तक में पढ़ेंगे।

उत्कृष्ट मंदिर सौ योजन लंबे, पचास योजन चौड़े और पचहत्तर योजन ऊँचे हैं। मध्यम जिनालय पचास योजन लंबे, पचीस योजन चौड़े और ३७ १/२ योजन ऊँचे हैं। जघन्य मंदिर पचीस योजन लम्बे, १२ १/२ योजन चौड़े, १८ ३/४ योजन ऊँचे हैं।

एक योजन में चार कोश, एक कोश में-दो मील होने से ये उत्कृष्ट मंदिर १०० यो., १०० × ८ मील से गुणा करने से आठ सौ मील लंबे हैं, अर्थात् ८०० मील के किलोमीटर करने से बारह सौ अस्सी १२८० कि. मी. लंबे हैं।

सुदर्शन मेरु आदि पाँचों मेरु के भद्रसाल, नंदनवन के मंदिर, नंदीश्वरद्वीप व वैमानिक देवों के मंदिर उत्कृष्ट प्रमाण वाले हैं। मेरु के सौमनसवन के, कुण्डलगिरि व रुचकगिरि, वक्षार, इष्वाकार मानुषोत्तरपर्वत और हिमवान आदि कुलाचलों के मंदिर मध्यम प्रमाण वाले हैं। पांडुकवन के मंदिर जघन्य प्रमाण वाले हैं।

विजयार्ध पर्वत के मंदिर, जंबूवृक्ष व शाल्मलीवृक्ष के मंदिर एक कोश लंबे, १/२ कोश चौड़े व पौन कोश ऊँचे हैं।[1]

प्रत्येक मंदिर के चारों तरफ तीन परकोटे हैं। प्रथम व द्वितीय परकोटे के अंतराल में चैत्यवृक्ष हैं। जिनके परिवार वृक्ष एक लाख, चालीस हजार एक सौ उन्नीस हैं। इन सभी वृक्षों की कटनी पर चारों दिशाओं में एक-एक जिनप्रतिमाएँ हैं। इसी ग्रंथ में त्रिलोकसार से दिए गए गाथाओं के विवरण में गाथा १०००, १००१ व १००२ में देखिए।

किसी एक विद्वान ने एक चित्र बनाकर दिखाया कि चैत्यवृक्ष के पत्ते-पत्ते व डाल-डाल पर प्रतिमाएँ हैं। यह गलत है। चैत्यवृक्ष की कटनी पर ही जिनप्रतिमाएँ हैं जो कि प्रत्येक दिशा में एक-एक हैं ऐसी एक-एक चैत्यवृक्ष में चार-चार प्रतिमाएँ हैं।

इन अकृत्रिम जिनमंदिरों को एवं उनमें प्रत्येक में विराजमान १०८-१०८ जिनप्रतिमाओं को तथा मानस्तंभ, स्तूप व चैत्यवृक्षों में विराजमान जिनप्रतिमाओं को मेरा कोटि-कोटि नमनहै।

1. त्रिलोकसार, पृ. 749 से।

नन्दीश्वर द्वीप के जिनमंदिर

(त्रिलोकसार ग्रन्थ से)

इदानीं त्रिलोकस्थिताकृत्रिमचैत्यालयानां सामान्येन व्यासादिकमाह —

आयामदलं वासं उभयदलं जिणघराणमुच्चत्तं।
दारुदयदलं वासं आणिद्दाराणि तस्सद्धं।।९७८।।

आयामदलं व्यासं उभयदलं जिनगृहाणामुच्चत्वं।
द्वारोदयदलं व्यासः अणुद्वाराणि तस्यार्धं।।९७८।।

आवाम । उत्कृष्टादिचैत्यालयानामायामा १०० । ५०। २५ धैं तेषां व्यासः ५०। २५। २५/२ आयामव्यासयोरुभयो उ० १५० म० ७५ ज० ७५/२ दलं जिनगृहाणामुच्चत्वं ७५ । ७५/२ । ७५/४ तेषां द्वारोदयः १६ । ८ । ४ दलं द्वार व्यासः ८ । ४ । २ क्षुल्लकद्वाराणि वृहद्द्वारार्धोदयव्यासानि।।९७८।।

अब त्रैलोक्यस्थित अकृत्रिम चैत्यालयों का सामान्य से व्यासादिक कहते हैं —

गाथार्थ : — उत्कृष्ट आदि चैत्यालयों के आयाम के अर्ध भाग प्रमाण उनका व्यास है तथा आयाम और व्यास के योग का अर्ध भाग प्रमाण उन जिनालयों का उदय (ऊँचाई) है। द्वारों की ऊँचाई के अर्धभाग प्रमाण द्वारों का व्यास (चौड़ाई) है तथा बड़े द्वारों के व्यासादि से छोटे द्वारों का व्यासादिक अर्ध अर्ध प्रमाण है।।९७८।।

विशेषार्थ : — उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य जिनालयों का आयाम क्रम से १०० योजन, ५० योजन और २५ योजन प्रमाण है। इन्हीं जिनालयों का व्यास (चौड़ाई) आयाम के अर्ध भाग प्रमाण अर्थात् ५० योजन, २५ योजन और १२ १/२ योजन प्रमाण है तथा इनकी ऊँचाई, लम्बाई और चौड़ाई के अर्धभाग प्रमाण अर्थात् (१००+५०)=१५० ÷ २ = ७५ योजन, (५० + २५)=७५ ÷ २ = ३७ १/२ योजन और (२५ + १२ १/२)= ७५ / २ × २ = १८ ३/४ योजन प्रमाण है। उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य जिनालयों के द्वारों की ऊँचाई क्रम से १६ योजन, ८ योजन और ४ योजन प्रमाण है तथा इन्हीं द्वारों की चौड़ाई, ऊँचाई के अर्धभाग प्रमाण अर्थात् ८ योजन, ४ योजन और २ योजन प्रमाण है। छोटे-छोटे द्वारों का उदय एवं व्यास बड़े द्वारों के उदय एवं व्यास से अर्ध अर्ध प्रमाण है। अर्थात् उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य जिनालयों में जो छोटे-छोटे दरवाजे हैं उनकी ऊँचाई क्रम से ८ योजन, ४ योजन और और २ योजन है तथा उनका व्यास (चौड़ाई) ४ योजन, २ योजन और एक योजन प्रमाण है।।

उक्तार्थमेव विशेषतो गाथाद्वयेनाह —

वरमज्झिमअवराणं दलक्कमं भद्दसालणंदणगा।
णंदीसरगविमाणगजिणालया होंति जेट्ठा हु।।९७९।।

सोमणसरुजगकुंडलवक्खारिसुगारमाणुसुत्तरगा।
कुलगिरिगा वि य मज्झिम जिणालया पांडुगा अवरा।।९८०।।

वरमध्यमावराणां दलक्रमं भद्रशालनन्दनकाः।
नन्दीश्वरकविमानगजिनालया भवन्ति ज्येष्ठाः हि।।९७९।।

सौमनसरुचककुण्डलवक्षोरष्वाकारमानुषोत्तरगाः।
कुलगिरिगा अपि च मध्यमा जिनालया पाण्डुगा अवराः।।९८०।।

वर। उत्कृष्टमध्यमजघन्यचैत्यालयानां व्यासादिकमर्धार्धक्रमं जानीहि। भद्रशालनन्दननन्दीश्वरविमानगतजिनालया जयेष्ठाः खलु भवन्ति।।९७९।।

सोमण। सौमनसरुचककुण्डलवक्षारेष्वाकारमानुषोत्तरगाः कुलगिरिगता अपि च जिनालयाः मध्यमा, पाण्डुकवनगता जघन्याः।।९८०।।

इस कहे हुए अर्थ को ही विशेष-दो गाथाओं द्वारा कहते हैं :—

गाथार्थ :—उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य जिनालयों का व्यासादिक क्रम से आधा आधा है। भद्रशाल वन, नन्दन वन, नन्दीश्वर द्वीप और वैमानिक देवों के विमानों में जो जिनालय हैं, ये उत्कृष्ट व्यासादिक प्रमाण वाले हैं तथा सौमनस् वन, रुचकगिरि, कुण्डलगिरि, वक्षार, इष्वाकार, मानुषोत्तर पर्वत और कुलाचलों पर जो जिनालय हैं, उनका व्यासादिक मध्यम और पाण्डुक वन स्थित जो जिनालय हैं, उनका व्यासादिक जघन्य प्रमाण वाला है।।९७९-९८०।।

विशेषार्थ :—उत्कृष्ट जिनालयों के व्यासादिक से मध्यम जिनालयों का व्यासादिक अर्धभाग प्रमाण है और मध्यम से जघन्य जिनालयों का व्यासादिक अर्धभाग प्रमाण है। भद्रशाल वन, नन्दन वन, नन्दीश्वर द्वीप और देवों के विमानगत जो जिनालय हैं, वे उत्कृष्ट प्रमाण वाले हैं। सौमनस् वन, रुचकगिरि, कुण्डलगिरि, वक्षार, इष्वाकार, मानुषोत्तर पर्वत और कुलाचलों पर जो जिनालय हैं, वे मध्यम तथा पाण्डुक वनस्थ जिनालय जघन्य प्रमाण वाले हैं।

तदनन्तरं, ज्येष्ठजिनालयानामायामागाढद्वारोत्सेधानाह ; —

जोयणसय आयामं दलगाढं सोलसं तु दारुदयं।
जेट्ठाणं गिहपासे आणिद्दाराणि दो दो दु।।९८१।।

योजनशतमायामः दलावगाढः षोडश तु द्वारोदयः।
ज्येष्ठानां गृहपार्श्वे अणुद्वारे द्वे द्वे तु।।९८१।।

जोयण। ज्येष्ठजिनालयानामायामो योजनशतं अर्धयोजनावगाढः षोडश-योजनानि तद्द्वारोदयः तज्जिनगृहपार्श्वे द्वे द्वे क्षुल्लकद्वारे भवतः।।९८१।।

उत्कृष्टादिविशेषणविरहितानां वसतीनामायामः कियानित्युक्ते आह —

वेयड्ढजंबुसामलिजिणभवणाणं तु कोस आयामं।
सेसाणं स्त्रगजोग्गं आयामं होदि जिणदिट्ठं।।९८२।।

विजयार्धजम्बूशाल्मलिजिनभवनानां तु क्रोश आयामः।
शेषाणां स्वकयोग्यः आयामो भवति जिनदृष्टः ।।९८२।।

वेयड्ढ । विजयार्धगिरौ जम्बूवृक्षे शाल्मलीवृक्षे च जिनभवनानामायामः एकक्रोशः शेषाणां भवनादिजिनालयानां स्वयोग्यायामो जिनैर्दृष्टः।।९८२।।

इसके बाद उत्कृष्ट जिनालयों का आयाम, गाध (नींव) और द्वारों की ऊँचाई कहते हैं—

गाथार्थ :—उत्कृष्ट जिनालयों का आयाम सौ योजन प्रमाण और गाध अर्ध योजन प्रमाण है। इनके द्वारों की ऊँचाई सोलह योजन प्रमाण है। उत्कृष्ट द्वारों के दोनों पार्श्व भागों में दो-दो छोटे द्वार हैं।।९८१।।

विशेषार्थ :—उत्कृष्ट जिनालयों की लम्बाई १०० योजन और अवगाढ अर्ध योजन प्रमाण है। इन जिनालयों के उत्कृष्ट द्वारों की ऊँचाई १६ योजन प्रमाण है। उत्कृष्ट द्वारों के दोनों पार्श्व भागों में दो-दो छोटे दरवाजे हैं।

उत्कृष्टादि विशेषण से रहित जिनालयों का आयाम कितना है ? ऐसा पूछने पर कहते हैं :-

गाथार्थ :—विजयार्ध पर्वत, जम्बू और शल्मली वृक्षों पर स्थित जिनालयों का आयाम एक कोस प्रमाण है तथा अवशेष जिनालयों (भवनवासियों के भवनों एवं व्यन्तरदेवों के आवासों में स्थित) का अपने-अपने योग्य आयामादिक का प्रमाण जिनेन्द्र देव के द्वारा देखा हुआ है अर्थात् अनेक प्रकार का है अतः यहाँ कहा नहीं जा सकता ।।९८२।।

उक्तानां जिनभवनानां परिकरं गाथासप्तकेनाह—

चउगोउरमणिसालति वीहिं पडि माणथंभ णवथूहा।
वणधयचेदियभूमी जिणभवणाणं च सव्वेसिं।।९८३।।

चतुर्गोपुरमणिशालत्रयं वीथीं प्रति मानस्तम्भानवस्तूपाः।
वनध्वजाचैत्यभूमयः जिनभवनानां च सर्वेषां।।९८३।।

चउ। सर्वेषां जिनभवनानां चतुर्गोपुरयुक्तमणिमयशालत्रयं प्रतिवीथ्येकैकमानस्तम्भाः। नव नव स्तूपाश्च भवन्ति। तच्छालत्रयान्तराले बाह्यादारभ्य क्रमेण वनध्वजचैत्य भूमयो भवन्ति।।९८३।।

जिणभवणे अट्ठसया गब्भगिहा रयणथंभवं तत्थ।
देवच्छंदो हेमो दुगअडचउवासदीहुदओ।।९८४।।

जिनभवनेषु अष्टशतानि गर्भगृहाणि रत्नस्तम्भवान् तत्र।
देवच्छंदो हैमः द्विकाष्टचतुर्व्यासदीर्घोदयः।।९८४।।

जिण। तेषु जिनभवनेष्यष्टोत्तरशतप्रमितानि गर्भगृहाणि सन्ति। तत्र जिनभवनमध्ये रत्नस्तम्भवान् हेममयद्विकाष्टचतुर्योजनव्यासदीर्घोदयो देवच्छन्दोऽस्ति।।९८४।।

सिंहासणादिसहिया विणीलकुंतल सुवज्रमयदंता।
विद्दुमअहरा किसलयसोहायरहत्थपायतला।।९८५।।

ऊपर कहे हुए जिनालयों का परिवार सात गाथाओं द्वारा कहते हैं :—

गाथार्थ :—समस्त जिनभवनों के चार गोपुर द्वारों से संयुक्त मणिमय तीन कोट हैं। प्रत्येक वीथी में एक-एक मानस्तम्भ और नव-नव स्तूप हैं। उन कोटों के अन्तरालों में क्रम से वन, ध्वजा और चैत्यभूमि हैं।।९८३।।

विशेषार्थ :—समस्त जिनभवनों के चारों ओर चार गोपुर द्वारों से संयुक्त मणिमय तीन कोट हैं। प्रत्येक वीथी में एक-एक मानस्तम्भ और नव-नव स्तूप हैं। बाहर से प्रारम्भ कर प्रथम और द्वितीय कोट के अन्तराल में वन हैं। द्वितीय और तृतीय कोट के अन्तराल में ध्वजाएँ तथा तृतीय कोट के बीच चैत्यभूमि है।

गाथार्थ :—उन समस्त जिन भवनों में प्रत्येक में एक सौ आठ गर्भगृह हैं तथा जिनभवनों के मध्य में रत्नों के स्तम्भों से युक्त स्वर्णमय एक-एक मण्डप है जिसकी लम्बाई ८ योजन, चौड़ाई दो योजन और ऊँचाई चार योजन प्रमाण है।

गाथार्थ :—उन गर्भगृहों के मध्य में सिंहासनादि से सहित तथा विशेष नीले केश, सुन्दर वज्रमय दाँत, मूँगा सदृश ओंठ तथा नवीन कोंपल की शोभा को धारण

दसतालमाणलक्खणभरिया पेक्खंत इव वदंता वा।
पुरुजिणतुंगा पडिगा रयणमया अट्ठअहियसया।।९८६।।

सिंहासनादिसहिता विनीलकुन्तलाः सुवज्रमयदन्ताः।
विद्रुमाधराः किसलयशोभाकरहस्तपादतलाः।।९८५।।
दशतालमानलक्षणभरिताः प्रेक्ष्यमाणा इव वदंत इव।
पुरुजिनतुङ्गाः प्रतिमाः रत्नमय्यः अष्टाधिकशताः।।९८६।।

सिंहासणादि। सिंहासनादिसहिता विनीलकुन्तलाः सुवज्रमयदन्ताः विद्रुमाधराः किसलयशोभाकरहस्तपादतलाः।।९८५।।

दस। दशतालमानलक्षण भरिताः प्रेक्षमाणा इव वदंत इव पुरुषजिनतुङ्गाः ५०० रत्नमय्यः अष्टाधिकशतप्रमिताः जिनप्रतिमास्तेषु गर्भगृहेष्वेकेकाः सन्ति।।९८६।।

ताः कथम्भूता :—

चमरकरणागजक्खगबत्तीसंमिहुणगेहि पुह जुत्ता।
सरिसीए पंतीए गब्भगिहे सुट्ठु सोहंति।।९८७।।
सिरिदेवी सुददेवी सव्वाण्हसणक्कुमारजक्खाणं।
रूवाणि य जिणपासे मंगलमट्ठविहमवि होदि।।९८८।।

करने वाले हैं हाथ और पैर के तलभाग जिनके दश ताल प्रमाण लक्षणों से भरी हुईं, देख रही हों मानों, बोल ही रहीं हों मानों और आदिनाथ भगवान् के बराबर है (५०० धनुष) ऊँचाई जिनकी ऐसी रत्नमय एक सौ आठ प्रतिमाएँ हैं।।९८५-९८६।।

विशेषार्थ :—उन १०८ गर्भगृहों के मध्य में सिंहासनादि से सहित रत्नमय १०८, १०८ प्रतिमाएँ हैं। जिनके विशेष नीले केश, सुन्दर वज्रमय दाँत, मूँगा सदृश ओंठ तथा नवीन कोंपल की शोभा को धारण करने वाले हाथ पैर के तल भाग हैं। जो दश ताल प्रमाण लक्षण से भरी हुई हैं। जो देखती हुई के सदृश, बोलती हुई के सदृश एवं आदिनाथ भगवान के सदृश ५०० धनुष ऊँची हैं।

वे प्रतिमाएँ कैसी हैं ?

गाथार्थ :—वे जिन प्रतिमाएँ, चमरधारी नागकुमारों के बत्तीस युगलों और यक्षों के बत्तीस युगलों सहित, पृथक्-पृथक् एक-एक गर्भगृह में सदृश पंक्ति से भली प्रकार शोभायमान होती हैं। उन जिन प्रतिमाओं के पार्श्व भाग में श्रीदेवी, श्रुतदेवी, सर्वाण्ह यक्ष और सानत्कुमार यक्ष के रूप अर्थात् प्रतिमाएँ हैं तथा अष्टमङ्गल द्रव्य भी होते हैं। झारी,

भिंगारकलसदप्पणवीयणधयचामरादवत्तमहा।
सुवइट्ठ मंगलाणि य अट्ठहियसयाणि पत्तेयं।।९८९।।

चमरकरनागयक्षगद्वात्रिंशन्मिथुनैः पृथक् युक्ताः।
सदृश्या पंक्त्या गर्भगृहे सुष्ठु शोभन्ते।।९८७।।
श्रीदेवी श्रुतदेवी सर्वाह्नसनत्कुमारयक्षाणां।
रूपाणि च जिनपार्श्वे मङ्गलमष्टविधमषि भवति।।९८८।।
भृङ्गारकलशदर्पणवीजनध्वजचामरातपत्रमथ।
सुप्रतिष्ठं मङ्गलानि च अष्टाधिकशतानि प्रत्येकम् ।।९८९।।

चमर। चमरकरनागयक्षगतद्वात्रिंशन्मिथुनैः पृथक्-पृथक् गर्भगृहे सदृश्या पंक्त्या युक्ताः सुष्ठु शोभन्ते।।९८७।।

सिरि। तज्जिनप्रतिमापार्श्वे श्रीदेवी श्रुतदेवी सर्वाह्नसनत्कुमारयक्षाणां रूपाणि अष्टविधानि मङ्गलानि च भवन्ति।।९८८।।

भिंगार। भृङ्गारकलशदर्पणवीजनध्वजचामरातपत्रसुप्रतिष्ठान्यष्टमङ्गलानि। तानि मङ्गलानि पुनः प्रत्येकमष्टाधिकशतप्रमितानि भवन्ति।।९८९।।

कलश, दर्पण, पङ्खा, ध्वजा, चामर, छत्र और ठोना ये आठ मंगल द्रव्य हैं। ये प्रत्येक मंगल द्रव्य १०८, १०८ प्रमाण होते हैं।।९८७-९८८-९८९।।

विशेषार्थ :—वे जिन प्रतिमाएँ चौंसठ चमरों से वीज्यमान हैं। अर्थात् हाथों में हैं चमर जिनके ऐसे नागकुमार के ३२ युगलों और यक्षों के ३२ युगलों से सहित हैं। पृथक्-पृथक् एक-एक गर्भगृह में सदृश पंक्ति से भली प्रकार शोभायमान होती हैं। उन प्रतिमाओं के पार्श्वभाग में श्री (लक्ष्मी) देवी, श्रुत (सरस्वती) देवी, सर्वाह्न यक्ष और सानत्कुमार यक्ष की प्रतिमाएँ तथा अष्ट मंगल द्रव्य हैं। झारी, कलश, दर्पण, पङ्खा, ध्वजा, चामर, छत्र और ठोना ये आठ मङ्गल द्रव्य हैं। ये प्रत्येक मंगल द्रव्य एक सौ आठ, एक सौ आठ प्रमाण होते हैं।

इसी प्रकार तिलोयपण्णत्ती में भी कहा है :—

सिरिसुददेवीणतहासव्वाण्हसणक्कुमार जक्खाणं।
रुवाणिं पत्तेक्कं पडि वररयणाइरइदाणिं।।१८८१।। (चतुर्थ अधिकार)

अर्थ :—प्रत्येक प्रतिमा के प्रति उत्तम रत्नादिकों से रचित श्रीदेवी, श्रुतदेवी तथा सर्वाण्ह व सानत्कुमार यक्षों की मूर्तियाँ रहती हैं।।१८८१।।

अथ गर्भगृहाद्बाह्यस्वरूपं गाथाचतुष्टयेनाह—

मणिकणयपुप्फसोहियदेवच्छंदस्स पुव्वदो मज्झे।
वसईए रूप्पकंचणघडासहस्साणि बत्तीसं।।९९०।।
महदारस्स दुपासे चउवीससहस्साणि धूवघडा।
दारबहिं पासदुगे अट्ठसहस्साणि मणिमाला।।९९१।।
तम्मज्झ हेममाला चउवीसं वदणमंडवे हेमा।
कलसामाला सोलस सोलसहस्साणि धूवघडा।।९९२।।
महुरझणझणणिणादा मोत्तियमणिणिम्मिया सकिंकिणिया।
बहुविहघंटाजाला रइदा सोहंति तम्मज्झे।।९९३।।

मणिकनकपुष्पशोभितदेवच्छन्दस्य पूर्वतो मध्ये।
वसत्यां रूप्यकाञ्चनघटसहस्राणि द्वात्रिंशत्।।९९०।।
महाद्वारस्य द्विपार्श्वे चतुर्विंशसहस्रं सन्ति धूपघटाः।
द्वारबहिः पार्श्वद्वये अष्टसहस्राणि मणिमालाः।।९९१।।
तन्मध्ये हेममाला चतुर्विंशतिः वदनमण्डपे हेमाः।
कलशमालाः षोडश षोडशसहस्राणि धूपघटाः।।९९२।।
मधुरझनझननिनादाः मौक्तिकमणिनिर्मिताः सकिङ्किणिकाः।
बहुविधघण्टाजाला रचिताः शोभन्ते तन्मध्ये।।९९३।।

अब गर्भगृह से बाह्य का स्वरूप चार गाथाओं द्वारा कहते हैं :—

गाथार्थ :—मणि और स्वर्ण के पुष्पों से सुशोभित देवच्छन्द के पूर्व में आगे जिनमन्दिर है, उसके मध्य में चाँदी और स्वर्ण के बत्तीस हजार घड़े हैं। महाद्वार के दोनों पार्श्व भागों में चौबीस हजार धूपघट हैं तथा उस महाद्वार के दोनों बाह्य पार्श्वभागों में आठ हजार मणिमय मालाएँ हैं। उन मणिमय मालाओं के मध्य में चौबीस हजार स्वर्णमय मालाएँ हैं तथा मुखमण्डप में स्वर्णमय सोलह हजार कलश, सोलह हजार मालाएँ और सोलह हजार धूपघट हैं तथा उसी मुखमण्डप का मध्य भाग मोती और मणियों से बनी हुईं मधुर झण झण शब्द करने वाली छोटी-छोटी किंकिणियों से युक्त नाना प्रकार के घन्टा जालों की रचना से शोभायमान हैं।।९९०-९९३।।

विशेषार्थ :—मणि और स्वर्ण के पुष्पों से सुशोभित जो देवच्छन्द है, उसके पूर्व में आगे जिनमन्दिर का मध्य चाँदी और स्वर्ण के बत्तीस हजार घड़ों से युक्त है। मन्दिर के महाद्वार के दोनों पार्श्व भागों में २४००० धूपघट हैं तथा उसी महाद्वार के दोनों बाह्य

मणि। मणिकनकपुष्पशोभितदेवच्छन्दस्य पूर्वतो वसत्यां मध्ये रूप्यकाञ्च-नमयानि द्वात्रिंशद्घटसहस्राणि भवन्ति।।९९०।।

मह। महाद्वारस्य द्वयोः पार्श्वयोश्चतुर्विंशतिसहस्राणि २४००० धूपघटाः सन्ति। तद्द्वारबाह्ये पार्श्वद्वये अष्टसहस्राणि ८००० मणिमालाः सन्ति।।९९१।।

तम्म। तासां मणिमालानां मध्ये चतुर्विंशतिसहस्राणि २४००० हेममालाः सन्ति। मुखमण्डपे पुनर्हेममयानि कलशानि तन्मयमालाश्च षोडशषोडशसहस्राणि सन्ति १६०००। १६००० तत्रैव पुनः षोडशसहस्राणि १६००० धूपघटाश्च सन्ति।।९९२।।

महु । तन्मण्डपस्यैव मध्ये पुनर्मधुरझणझणनिनादा मौक्तिकमणिनिर्मिताः साकिङ्किणिकाः बहुविधघंटाजाला अनेकरचनायुक्ताः शोभन्ते।।९९३।।

तद्वसतेः क्षुल्लकद्वारादिस्वरूपमाह—

वसईमज्झगदक्खिणउत्तरतणुदारगे तदद्धं तु।
तप्पुट्ठे मणिकञ्चणमालडचउवीसगसहस्सं।।९९४।।

वसतिमध्यगदक्षिणोत्तरतनुद्वारे तदर्धं तु।
तत्पृष्ठे मणिकाञ्चनमाला अष्टचतुर्विंशकसहस्राणि।।९९४।।

पार्श्व भागों में ८००० मणिमय मालाएँ हैं और उन्हीं मणिमय मालाओं के मध्य में २४००० स्वर्णमय मालाएँ हैं तथा उस महाद्वार के आगे मुखमण्डप का मध्य भाग, मोती एवं मणियों से बनी हुई मधुर झन-झन शब्द करने वाली छोटी-छोटी किंकिणियों से संयुक्त नाना प्रकार के घंटाओं के समूह की रचना से शोभायमान है।

उस मन्दिर के छोटे द्वारों का स्वरूप कहते हैं—

गाथार्थ :–जिनमन्दिर के दक्षिणोत्तर पार्श्व भागों में छोटे-छोट द्वार हैं। उनकी मालादिक का प्रमाण महाद्वार के प्रमाण से अर्धभाग प्रमाण है। उस मन्दिर के पृष्ठभाग में आठ हजार मणिमय मालाएँ और २४००० स्वर्णमय मालाएँ हैं।।९९४।।

ऊपरि कथित मुखमण्डपादिकों का व्यास आदि तथा उनके आगे स्थित रचना का स्वरूप पन्द्रह गाथाओं द्वारा कहते हैं :–

गाथार्थ :–जिनमन्दिर के आगे जिनमन्दिर सदृश ही व्यास एवं आयाम वाला और १६ योजन ऊँचा मुखमण्डप है। उस मुखमण्डप के आगे चौकोर प्रेक्षण मण्डप है, जिसका व्यास सौ योजन और ऊँचाई साधिक सोलह योजन है। उस प्रेक्षण मण्डप के आगे दो योजन ऊँचा, अस्सी योजन चौड़ा, चौकोर और स्वर्णमय पीठ है। उस पीठ के मध्य में चार के घन (६४ योजन) प्रमाण चौड़ा और सोलह योजन ऊँचा, चौकोर

वसई । तद्वसतेर्दक्षिणोत्तरपार्श्व मध्यगतक्षुल्लकद्वारे मुख्यद्वारोक्तविधानं सर्वमर्धार्धं भवति तद्वसतेः पृष्ठभागे पुनर्मणिमालाः काञ्चनमालाश्चाष्टसहस्राणि ८००० चतुर्विंशतिसहस्राणि २४००० च स्युः।।९९४।।

उक्तस्य मुखमण्डपादेर्व्यासादिकं ततः पुरस्तात् स्थितानां सर्वेषां स्वरूपं गाथापञ्चदशकेनाह—

जिनगिहवासायामो तप्पुरदो सोलसोच्छिओ होदि।
मुहमंडओ तदग्गे पिक्खण चउरस्स मंडवओ।।९९५।।
सदवित्थारो साहियसोलुदओ हेमपीडियं पुरदो।
चउरस्सं जोयणदुगसमुच्छयं सीदिवित्थारं।।९९६।।
तम्मज्झे चउरस्सो मणिमय चउविंदवास सोलुदओ।
अट्ठाणमंडओ तप्पुरदो तालुदयथुवमणिवीढं।।९९७।।
तं पुण चउगोउरजुदबारंबुजवेदियाहि संयुत्तं।
मज्झे मेहलतियजुद चउघणदीहुदयवास बहुरयणो।।९९८।।
थूहो जिणविंबचिदो णवण्हमेवं कमेण तप्पुरदो।
वासायामसहस्सं बारसवेदिजुद हेममयपीठं।।९९९।।
तहिं चउदीहिगिवासक्खंधा बहुमणिमया ससालतिया।
बारहजोयण आयदचउमहसाहा अणेयतणुसाहा।।१०००।।
बारहयोजणवित्थडसिहरा सिद्धत्थचेत्तणामतरू।
णाणादलपुप्फफला पंचहियापउमपरिवारा।।१००१।।

मणिमय आस्थान मण्डप है। उसके आगे चालीस योजन ऊँचे स्तूप का मणिमय पीठ है। जो चार द्वारों और बारह पद्मवेदियों से संयुक्त है। उस पीठ के मध्य में तीन मेखलाओं कटनियों से सहित, चार के घन प्रमाण अर्थात् ६४ योजन लम्बा, ६४ योजन चौड़ा और ६४ योजन ऊँचा, बहुरत्नों से रचित और जिनबिम्ब से उपचित स्तूप है। नवों स्तूपों का स्वरूप इसी क्रम से है। उस स्तूप के आगे हजार योजन लम्बा, हजार योजन चौड़ा बारह वेदियों से संयुक्त स्वर्णमय पीठ है। उस पीठ के ऊपर मणिमय तीन कोटों से संयुक्त सिद्धार्थ और चैत्य नाम के दो वृक्ष हैं। उन वृक्षों के स्कन्ध ४ योजन लम्बे और एक योजन चौड़े हैं। बारह योजन लम्बी चार महाशाखाएँ एवं अनेक छोटी शाखाएँ हैं। उन वृक्षों का उपरिम भाग बारह योजन चौड़ा है। वे वृक्ष नाना प्रकार के पत्र, फूल और फलों से सहित हैं। उनके परिवार वृक्षों की संख्या पद्मद्रह के मुख्य कमल के परिवार कमलों के प्रमाण से पाँच अधिक है।।९९५ से १००१ तक।। (सप्तक)

जिनगृहव्यासायामः तत्पुरतः षोडशोच्छ्रितो भवति।
मुखमण्डपः तदग्रे प्रेक्षणः चतुरस्रः मण्डपः।।९९५।।
शतविस्तारः साधिकषोडशोदयः हेमपीठं पुरतः।
चतुरस्रं योजनद्विकसमुच्छ्रयं अशीतिविस्तारं।।९९६।।
तन्मध्ये चतुरस्रः मणिमयः चतुर्वृन्दव्यासः षोडशोदयः।
आस्थानमण्डपः तत्पुरतः चत्वारिंशदुदयस्तूपमणिपीठं।।९९७।।
तत् पुनः चतुर्गोपुरयुतद्वादशाम्बुजवेदिकाभिः संयुक्तं।
मध्ये मेखलात्रययुतः चतुर्धनदीर्घोदयव्यासः बहुरत्नः।।९९८।।
स्तूपः जिनबिम्बचितः नवानामेवं क्रमेण तत्पुरतः।
व्यासायामसहस्रं द्वादशवेदीयुतं हेममयपीठं।।९९९।।
तस्मिन् चतुर्दीर्घैकव्यासस्कन्धौ बहुमणिमयौ सशालत्रयौ।
द्वादशयोजनायतचतुर्महाशाखौ अनेकतनुशाखौ।।१०००।।
द्वादशयोजनविस्तृतशिखरौ सिद्धार्थचैत्यनामतरू।
नानादलपुष्पफलौ पञ्चाधिकपद्मपरिवारौ।।१००१।।

जिण। जिनगृहव्यासा ५० यामः १०० षोडश १६ योजनोच्छ्रितो मुखमण्डपः तज्जिनगृहपुरतो भवन्ति। तस्याग्रे चतुरस्त्रप्रेक्षणमण्डपश्च स्यात् ।।९९५।।

सद । स च कियानिति चेत् शतयोजन १०० विस्तारः साधिक षोडश १६ योजनोदयः। तत्प्रेक्षणमण्डपस्य पुरतो योजनद्विकसमुच्छ्रयमशीतियोजन

विशेषार्थ :–जिनमन्दिर के आगे जिनमन्दिर के ही सदृश १०० योजन लम्बा, ५० योजन चौड़ा और १६ योजन ऊँचा मुखमण्डप है। उस मुखमण्डप के आगे चौकोर प्रेक्षण मण्डप है। जो १०० योजन चौड़ा, १०० योजन लम्बा और साधिक १६ योजन ऊँचा है। उस प्रेक्षण मण्डप के आगे ८० योजन लम्बा, ८० योजन चौड़ा और दो योजन ऊँचा (चौकोर) स्वर्णमय पीठ है। चबूतरे का नाम पीठ है। उस पीठ के मध्य में चौकोर, मणिमय, ६४ योजन लम्बा, चौड़ा और १६ योजन ऊँचा आस्थान मण्डप है। सभामण्डप का नाम आस्थान मण्डप है। इस आस्थान मण्डप के आगे ४० योजन ऊँचे स्तूप का मणिमय पीठ है। वह पीठ चार गोपुर द्वारों एवं बारह पद्म वेदियों से सहित है। उस पीठ के मध्य में तीन मेखलाओं अर्थात् कटनी से सहित ६४ योजन लम्बा, चौड़ा और १६ योजन ऊँचा आस्थान मण्डप है। सभामण्डप का नाम आस्थान मण्डप है। इस आस्थान मण्डप के आगे ४० योजन ऊँचे स्तूप का मणिमय पीठ है। वह पीठ चार

८० विस्तारं चतुरस्त्रं हेममयपीठमस्ति।।९९६।।

तम्म। तत्पीठमध्ये चतुरस्त्रो मणिमयश्चतुर्धन ६४ व्यासः षोडश १६ योजनोदय आस्थानमण्डपः स्यात् । तत्पुरतः पुनश्चत्वारिंश ४० द्योजनोदय स्तूपस्य मणिमयं पीठमस्ति।।९९७।।

तं पुण । तत्पीठं पुनश्चतुर्गोपुरयुतद्वादशाम्बुजवेदिकाभिः संयुक्तं। तत्पीठमध्ये मेखलात्रययुतश्चतुर्धन ६४ दीर्घोदयव्यासो बहुरत्नः।।९९८।।

थूहो । जिनबिम्बचितः स्तूपोऽस्ति नवानां स्तूपानामेवं क्रमेण स्वरूपं स्यात्। ततः स्तूपस्य पुरतो व्यासायामसहस्रं द्वादश १२ वेदीयुतं हेममयपीठ-मस्ति।।९९९।।

तहिं । तस्मिन् पीठे चतुर्योजनदीर्घैकयोजनव्यासस्कन्धौ बहुमणिमयौ शालत्रयसहितौ द्वादशयोजनायतचतुर्महाशाखौ अनेकतनुशाखौ।।१०००।।

बारह । द्वादशयोजनविस्तृतशिखरौ नानादलपुष्पफलौ पञ्चाधिकपद्मपरिवारौ सिद्धर्थचैत्यनामानौ तरू स्तः।।१००१।।

मूलगपीठणिसण्णा चउद्दिसं चारि सिद्धजिणपडिमा।
तप्पुरदो महकेदू पीठे चिट्ठंति विविहवण्णणगा।।१००२।।

गोपुर– द्वारों एवं बारह पद्म वेदियों से सहित है। उस पीठ के मध्य में तीन मेखलाओं अर्थात् कटनी से सहित ६४ योजन लम्बा, ६४ योजन चौड़ा और ६४ योजन ऊँचा, बहुरत्नों से रचित और जिनबिम्ब से उपचित स्तूप है। इसी प्रकार के नव स्तूप हैं। अर्थात् नव ही स्तूपों के स्वरूपों का वर्णन इसी स्तूप सदृश है। इन स्तूपों के ऊपर जिनबिम्ब विराजमान हैं। इस स्तूप के आगे अर्थात् चारों ओर १००० योजन लम्बा, १००० योजन चौड़ा बारह वेदियों से संयुक्त स्वर्णमय पीठ है। उस पीठ के ऊपर सिद्धार्थ और चैत्य नाम के दो वृक्ष हैं। जिन वृक्षों का स्कन्ध ४ योजन लम्बा और एक योजन चौड़ा है। जिनके चार–चार महाशाखाओं की लम्बाई १२ योजन प्रमाण है। इनमें छोटी शाखाएँ अनेक हैं। इनका उपरिम भाग अर्थात् शिखर १२ योजन चौड़ा है। ये वृक्ष नाना प्रकार के पत्र पुष्प और फलों से सहित हैं। इनके परिवार वृक्षों की संख्या पद्मद्रह के मुख्य कमल के परिवार कमलों के प्रमाण से ५ अधिक हैं अर्थात् एक लाख चालीस हजार एक सौ बीस हैं।

गाथार्थ :–चारों दिशाओं में उन वृक्षों के मूल में जो पीठ अवस्थित हैं उन पर चार सिद्ध प्रतिमाएँ और चार अरहन्त प्रतिमाएँ विराजमान हैं। उन प्रतिमाओं के आगे पीठ हैं जिनमें नाना प्रकार के वर्णन से युक्त महाध्वजाएँ स्थित हैं।।१००२।।

विशेषार्थ :–चारों दिशाओं में स्थित सिद्धार्थवृक्ष की पीठ—कटनी पर सिद्ध

मूलगपीठनिषण्णा चतुर्दिक्षु चतस्रः सिद्धजिनप्रतिमाः।
तत्पुरतः महाकेतवः पीठेतिष्ठन्ति विविधवर्णनकाः।।१००२।।

मूलग । तत्तरुमूलगतपीठनिषव्णाश्चतुर्दिक्षु चतस्रः सिद्धतरुमूले सिद्ध-प्रतिमाश्चैत्यतरुमूले जिनप्रतिमाः सन्ति। तत्पुरतः पीठे विविधवर्णनका महाकेतवस्तिष्ठन्ति।।१००२।।

प्रतिमाएँ और चैत्यवृक्ष की पीठ—कटनी पर अरहन्त प्रतिमाएँ विराजमान हैं। उन प्रतिमाओं के आगे पीठ हैं जिनमें नाना प्रकार के वर्णन से युक्त महाध्वजाएँ स्थित हैं।

शंका :–सिद्ध प्रतिमा और अरहन्त प्रतिमा में क्या अन्तर है ?

समाधान :–अरहन्त प्रतिमा अष्टप्रातिहार्य संयुक्त ही होती हैं, किन्तु सिद्ध प्रतिमा अष्ट प्रातिहार्य रहित होती हैं।। यथा :—

१. वसुनन्दि प्रतिष्ठा पाठ तृतीय परिच्छेद :—

प्रातिहार्याष्टकोपेतं, सम्पूर्णावयवं शुभम् ।
भावरूपानुविद्धाङ्गं, कारयेद् बिम्बमर्हता।।६९।।
प्रातिहार्यैर्विना शुद्धं, सिद्धं बिम्बमपीदृशः।
सूरीणां पाठकानां च, साधूनाम् च यथागमम् ।।७०।।

अर्थ :–अष्टप्रातिहार्यों से युक्त, सम्पूर्ण अवयवों से सुन्दर तथा जिनका सन्निवेष (आकृति) भाव के अनुरूप है ऐसे अरहन्त बिम्ब का निर्माण करें।।६९।।

सिद्ध प्रतिमा शुद्ध एवं प्रातिहार्य से रहित होती हैं। आगमानुसार आचार्य, उपाध्याय एवं साधुओं की प्रतिमाओं का भी निर्माण करें।।७०।।

२. जयसेन प्रतिष्ठा पाठ के बिम्ब निर्माण प्रकरण में भी कहा है कि—

सल्लक्षणं भावविवृद्ध हेतुकं, सम्पूर्ण शुद्धावयवं दिगम्बरं।
सत्प्रातिहार्य्यैर्निजचिन्हभासुरं, संकारये बिम्बमथार्हतः शुभम् ।।१८०।।
सिद्धेश्वराणां प्रतिमाऽपियोज्या, तत्प्रातिहार्यादि विना तथैव।
आचार्य सत्पाठक साधु सिद्ध , क्षेत्रादिकानामपि भाववृद्धयै।।१८१।।

अर्थ :–प्रशस्त हैं लक्षण जिनके, जो भावों की विशुद्धि में कारण हैं, निर्दोष सर्व अवयवों से सहित, नग्न दिगम्बर, सुन्दर प्रतिहार्य एवं स्वकीय चिह्न से समन्वित हैं ऐसे मनोहर अरहन्त बिम्ब का निर्माण करावें। उसी प्रकार भावों की विशुद्धि के लिए प्रातिहार्य बिना सिद्धों की (आगमानुसार) आचार्य, उपाध्याय एवं साधुओं की भी प्रतिमाओं का निर्माण करावें। सिद्धक्षेत्र आदि की आकृतियों की भी स्थापनाकरें।।१८०,१८१।।

सोलुदय कोसवित्थड कणयत्थंभग्गगा हु रयणमया।
चित्तवडछत्ततिदया बहुगा जणणयणमणरमणा।।१००३।।
तप्पुरदो जिनभवणं तच्चउदिस विविहकुसुम चउ दहगा।
दसगाढसयदलायदवासा मणिकणयवेदिजुदा।।१००४।।
पुरदो सुरकीडणमणिपासाददु होंति वीहिपासदुगे।
पण्णुदयं दलवासो तप्पुरदो तोरणं होदि।।१००५।।
तं मणिथंभग्गठियं मुत्ताघंटासुजाल पण्णुदयं।
तद्दलजोयणवासं जिणबिंबकदंवरमणिज्जं।।१००६।।
पुरदो पासाददुगं फलिहादिमसालदारपासदुगे।
अब्भंतरे सदुदयं दलवासं रयणसंघडियं।।१००७।।

---

३. श्री आशाधर प्रतिष्ठा सारोद्धार के प्रथम अध्याय में भी कहा है कि :—

शान्तप्रसन्नमध्यस्थ, नासाग्रस्था विकार दृक्।
सम्पूर्णभावरूपानु, विहाङ्ग लक्षणान्वितम्।।६३।।
रौद्रादिदोष निर्मुक्तं, प्रातिहार्याङ्कयक्षयुक्।
निर्माप्य विधिना पींठे, जिनबिम्बं निवेशयेत्।।६४।।

अर्थ :–शान्त, प्रसन्न, मध्यस्थ, नासाग्र और अविकार दृष्टि, सम्पूर्ण भावानुरूप, स्वकीय लक्षण से समन्वित, रौद्रादि (क्रूर आदि) दृष्टि से रहित तथा यक्ष यक्षणी सहित जिनबिम्ब का निर्माण कराकर विधिपूर्वक वेदिका में विराजमान करें।। ६३, ६४।।

गाथार्थ :–उन ध्वजाओं के स्वर्णमय स्तम्भ सोलह योजन ऊँचे और एक कोश चौड़े हैं। उन स्वर्ण स्तम्भों के अग्रभाग रत्नमय एवं मनुष्यों के नेत्र और मन को सुन्दर लगने वाले बहुत से नाना प्रकार के ध्वजा रूप वस्त्रों एवं तीन छत्रों से शोभायमान हैं। उस ध्वजापीठ के आगे जिनमन्दिर हैं, जिनकी चारों दिशाओं में नाना प्रकार के फूलों से एवं मणिमय और स्वर्णमय वेदियों से संयुक्त, सौ योजन लम्बे, ५० योजन चौड़े और दश योजन गहरे चार द्रह हैं। इन द्रहों के आगे जो वीथी (मार्ग) हैं उनके दोनों पार्श्व भागों में देवों के क्रीडा करने के मणिमय दो प्रासाद हैं, जिनकी ऊँचाई ५० योजन और चौड़ाई २५ योजन है। इन प्रासादों के आगे तोरण हैं। वे तोरण मणिमय स्तम्भों के अग्र भाग में स्थित, मोतीमाल और घन्टाओं के समूह से युक्त तथा जिनबिम्बों के समूह से रमणीक हैं। उनकी ऊँचाई पचास योजन और चौड़ाई पच्चीस योजन प्रमाण है। उस तोरण के आगे स्फटिकमय प्रथम कोट है। उस कोट द्वार के दोनों पार्श्व भागों में कोट के

जं परिमाणं भणिदं पुव्वगदारम्हि मंडवादीणं।
दक्खिणउत्तरदारे तदद्धमाणं गहीदव्वं।।१००८।।
वंदणभिसेयणच्च णसंगीयवलोयमंडवेहिं जुदा।
कीडणगुणणगिहेहि य विसालवरपट्टसालेहिं।।१००९।।

षोडशोदयाः क्रोशविस्ताराः कनकस्तम्भाग्रगा हि रत्नमयाः।
चित्रपटछत्रत्रितया बहुका जननयनमनोरमणाः।।१००३।।
तत्पुरतः जिनभवनं तच्चतुर्दिक्षु विविधकुसुमाः चत्वारो ह्रदाः।
दशावगाधशतदलायतव्यासाः मणिकनकवेदीयुताः।।१००४।।
पुरस्तात् सुरक्रीडनमणिमयप्रासादद्वयं भवन्ति वीथिपार्श्वद्वये।
पञ्चाशदुदयं दलव्यासं तत्पुरतस्तोरणं भवति।।१००५।।
तत् मणिस्तम्भाग्रस्थितं मुक्ताघण्टासुजालं पञ्चाशदुदयं।
तद्दलयोजनव्यासं जिनबिम्बकदम्बरमणीयं।।१००६।।
पुरतः प्रासादद्वयं स्फटिकादिमशालद्वारपार्श्वद्वये।
अभ्यन्तरे शतोदयं दलव्यासं रत्नसङ्घटितम् ।।१००७।।

भीतर सौ योजन ऊँचे और ऊँचाई के अर्धभाग प्रमाण अर्थात् ५० योजन चौड़े रत्ननिर्मापित दो मन्दिर हैं। पूर्वद्वार में मण्डपादिक का जो प्रमाण कहा था उसका अर्ध प्रमाण दक्षिणोत्तर द्वारों में ग्रहण करना चाहिए।

वे दोनों मन्दिर वन्दना मण्डप, अभिषेक मण्डप, नर्तन, संगीत और अवलोकन मण्डपों से तथा क्रीड़ागृह, गुणनगृह (शास्त्राभ्यास आदि का स्थान) और विशाल एवं उत्कृष्ट पट्टशाला से संयुक्त हैं।।१००३ से १००९।।

विशेषार्थ :–उन ध्वजाओं के स्वर्णमय स्तम्भ १६ योजन ऊँचे और एक कोश चौड़े हैं। उन ध्वजाओं के स्वर्णमय स्तम्भों के अग्रभाग रत्नमय एवं मनुष्यों के मन और नेत्रों को रमणीक लगने वाले तथा नाना प्रकार के ध्वजा रूप वस्त्रों से युक्त बहुत सी ध्वजाओं और तीन छत्रों से शोभायमान हैं। सम्पूर्ण ध्वजाएँ रत्नमय हैं अर्थात् पुद्गल का ही परिणमन वस्त्र रूप हुआ है। उस ध्वजा पीठ के आगे जिनमन्दिर हैं, जिनकी चारों दिशाओं में विविध प्रकार के फूलों से एवं मणिमय और स्वर्णमय वेदियों से संयुक्त, सौ योजन लम्बे, ५० योजन चौड़े ओर दश योजन गहरे चार द्रह हैं। इन द्रहों के आगे जो मार्ग हैं, उनके दोनों पार्श्व भागों में देवों के क्रीड़ा करने के मणिमय दो प्रासाद हैं जिनकी ऊँचाई ५० योजन और चौड़ाई २५ योजन है।

यत् परिमाणं भणितं पूर्वद्वारे मण्डपादीनाम् ।
दक्षिणोत्तरद्वारे तदर्धमानं ग्रहीतव्यं।।१००८।।
वन्दनाभिषेकनर्तनसङ्गीतावलोकमण्डपैः युतानि।
क्रीडनगुणनगृहैश्च विशालवरपट्टशालैः।।१००९।।

सोलुदय । षोडश १६ योजनोदया एकक्रोशविस्ताराः तत् केतूनां कनकस्तम्भाः तेषामग्रगा रत्नमया बहुकाः जननयनमनोरमणाश्चित्रपटछत्रत्रया शोभन्ते।।१००३।।

तप्पुर । तद्ध्वजात्पुरतो जिनभवनमस्ति तस्य चतुर्दिक्षु विविधकुसुमाः दशयोजनावगाधाः शतयोजनायतास्तदर्ध ५० व्यासा मणिकनकवेदीयुताश्चत्वारो ह्रदाः सन्ति।।१००४।।

पुरदो । ततः पुरस्ताद्वीथीपार्श्वदये पञ्चाश ५० द्योजनोदयं तद्दल २५ व्यासं सुरक्रीडनमणिमयप्रासादद्वयं भवति। तस्य पुरतस्तोरणं भवति।।१००५।।

तं मणि । तत्तोरणं मणिस्तम्भाग्रस्थितं मुक्ताघण्टासुजालं पञ्चाश ५० द्योजनोदयं तद्दल २५ योजनव्यासं जिनबिम्बकदम्बरमणीयं भवति।।१००६।।

पुरदो । तत्तोरणस्य पुरतः स्फटिकमयादिमशालस्याभ्यन्तरे द्वारपार्श्वद्वये शतयोजनोदयं तद्दल ५० व्यासं रत्नघटितं प्रासादद्वयमस्ति।।१००७।।

जं परि । पूर्वस्मिन् द्वारे मण्डपादीनां यत्परिमाणं भणितं तस्यार्धप्रमाणं दक्षिणद्वारे उत्तरद्वारे च ग्रहीतव्यम् ।।१००८।।

वंदण । तानि चैत्यालयानि पुनर्वन्दनाभिषेकनर्तनसङ्गीतावलोकनमण्डपैर्युतानि क्रीडनगुणनगृहैश्च विशालवरपट्टशालैश्च युतानि भवन्ति।।१००९।।

इन प्रासादों के आगे तोरण हैं, जो मणिमय स्तम्भों के अग्रभाग में स्थित, मोतीमाल और घण्टाओं के समूह से युक्त एवं जिनबिम्बों के समूह से रमणीक है। उनकी ऊँचाई ५० योजन और चौड़ाई २५ योजन प्रमाण है। उन तोरणों के आगे स्फटिकमय प्रथम कोट है। उस कोट द्वार के दोनों पार्श्व भागों में कोट के भीतर १०० योजन ऊँचे और ५० योजन चौड़े रत्ननिर्मापित दो मन्दिर हैं। पूर्वद्वार में मण्डपादिक का जो प्रमाण कहा था उसका अर्ध प्रमाण दक्षिण और उत्तर द्वारों में ग्रहण करना चाहिए। वे दोनों मन्दिर वन्दना मण्डप, अभिषेक मण्डप, नर्तन मण्डप, संगीत मण्डप और अवलोकन मण्डपों से तथा क्रीड़ागृह, गुणनगृह (शास्त्राभ्यास आदि का स्थान) और विशाल एवं उत्कृष्ट पट्टशाला (चित्राम आदि दिखाने का स्थान) से संयुक्त हैं।

साम्प्रतं प्रथमद्वितीयशालयोरन्तरालस्वरूपमाह —

सिहगयवसहगरुडसिहिंदिणहंसारविंदचक्कधया।
पुह अट्ठसया चउदिसमेक्केक्के अट्ठसय खुल्ला।।१०१०।।

सिंहगजवृषभगरुडशिखींद्विनहंसारविन्दचक्रध्वजाः।
पृथक् अष्टशतानि चतुर्दिशमेकैकस्मिन् अष्टशतं क्षुल्लाः।।१०१०।।

सिह । सिंहगजवृषभगरुडशिखींद्विनहंसारविन्दचक्रध्वजाः पृथक् पृथगष्टोत्तरशतानि। एवं प्रत्येकं चतुर्दिक्षु भवन्ति। अत्रैकैकस्मिन् मुख्यध्वजे अष्टोत्तरशतक्षुल्लकध्वजा भवन्ति।।१०१०।।

द्वितीयप्राकारबाह्ययोरन्तरालस्वरूपं गाथात्रयेणाह —

चउवणमसोयसत्तच्छदचंपयचूदमेत्थ कप्पतरू।
कणयमयकुसुमसोहा मरगयमयविविहपत्तड्ढा।।१०११।।

अब प्रथम और द्वितीय कोटों के अन्तराल का स्वरूप कहते हैं :—

गाथार्थ :—प्रत्येक जिनमन्दिर की चारों दिशाओं में सिंह, हाथी, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, कमल और चक्र के आकार की १०८, १०८ ध्वजाएँ हैं तथा इन १०८, १०८ मुख्य ध्वजाओं में प्रत्येक की १०८, १०८ छोटी ध्वजाएँ हैं।।१०१०।।

विशेषार्थ :—प्रत्येक जिनमन्दिर की चारों दिशाओं में सिंह, हाथी, वृषभ, गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, कमल और चक्र के चिह्नों से चिह्नित १०८, १०८ मुख्य ध्वजाएँ हैं तथा इन १०८, १०८ मुख्य ध्वजाओं में प्रत्येक की १०८, १०८ ही छोटी ध्वजाएँ हैं।

प्रथम और द्वितीय कोट के बीच के अन्तराल में ध्वजाएँ हैं। प्रत्येक जिनमन्दिर की, एक दिशा में सिंह चिह्नाङ्कित ध्वजाएँ १०८, हाथी चिह्नाङ्कित १०८ इसी प्रकार वृषभादि चिह्नाङ्कित भी १०८, १०८ मुख्य ध्वजाएँ हैं। अर्थात् मन्दिर की एक दिशा में सिंह आदि दश प्रकार के चिह्नों को धारण करने वाली (१०८ × १०) = १०८० मुख्य ध्वजाएँ हैं। एक दिशा में १०८० हैं, अतः चार दिशाओं में (१०८०×४) = ४३२० मुख्य ध्वजाएँ हुईं। एक मुख्य ध्वजा की छोटी परिवार ध्वजाएँ १०८ हैं अतः ४३२० मुख्य ध्वजाओं की (४३२० × १०८) = ४६६५६० परिवार ध्वजाओं का प्रमाण है और एक मन्दिर सम्बन्धी सम्पूर्ण ध्वजाओं का प्रमाण (४६६५६०+४३२०) = ४७०८८० है। ये ध्वजाएँ प्रथम और द्वितीय कोट के अन्तराल में हैं।

अब द्वितीय कोट और तृतीय (बाह्य) कोट के अन्तराल का स्वरूप तीन गाथाओं द्वारा कहते हैं :—

गाथार्थ :—द्वितीय और तृतीय कोट के अन्तराल में अशोक, सप्तच्छद, चम्पक और आम्र के चार वन हैं। उन वनों में भोजनाङ्गादि दश प्रकार के कल्पवृक्ष हैं,

वेलुरियफला विद्दुमविसालसाहा दसप्पयारा ते।
पल्लंकपाडिहेरग चउदिसमूलगय जिणपडिमा।।१०१२।।
सालत्तयपीढत्तयजुत्ता मणिसाहपत्तपुप्फफला।
तच्चउवणमज्झगया चेदियरुक्खा सुसोहंति।।१०१३।।
चतुर्वनमशोकसप्तच्छदचम्पकचूतमत्र कल्पतरवः।
कनकमयकुसुमशोभाः मरकतमयविविधपत्राढ्याः।।१०११।।
वैडूर्यफला विद्रुमविशालशाखाः दशप्रकारास्ते।
पल्यङ्कप्रातिहार्यगाः चतुर्दिशामूलगता जिनप्रतिमाः।।१०१२।।
शालत्रयपीठत्रययुक्ताः मणिशाखापत्रपुष्पफलाः।
तच्चतुर्वनमध्यगताः चैत्यवृक्षाः सुशोभन्ते।।१०१३।।

चउ । अशोकसप्तच्छदचम्पकचूतमयानि चत्वारि वनानि सन्ति। अत्र पुनः कनकमयकुसुमशोभिताः मरकतमयविविधपत्राढ्याः कल्पतरवश्च सन्ति।।१०११।।

वेलुरिय। ते च पुनः वैडूर्यफला विद्रुमविशालशाखाः दशप्रकाराः स्युः। तत्रैव वने पुनः पल्यङ्कप्रातिहार्ययुक्तचतुर्दिग्मूलगतजिनप्रतिमाः।।१०१२।।

साल । शालत्रयपीठत्रययुक्ताः मणिमयशाखापत्रपुष्पफलास्तच्चतुर्वनमध्यगताश्चैत्यवृक्षाः सुशोभन्ते।।१०१३।।

जो स्वर्णमय फूलों से सुशोभित, मरकत मणिमय नाना प्रकार के पत्रों से सहित, वैडूर्य रत्नमय फलों से युक्त और विद्रुम मूँगामय डालियों से संयुक्त हैं। उन चारों वनों के मध्य में तीन कोट और तीन पीठ से संयुक्त तथा मणिमय डाली, पत्र, पुष्प और फलों से युक्त चैत्यवृक्ष शोभायमान होते हैं। उन चैत्यवृक्षों के मूल की चारों दिशाओं में पल्यङ्कासन और प्रातिहार्यों से युक्त जिनबिम्ब विराजमान हैं।।।१०११-१०१३।।

विशेषार्थ :—दूसरे और तीसरे कोट के अन्तराल में अशोक, सप्तच्छद, चम्पक और आम्र के चार वन हैं। उन वनों में स्वर्णमय फूलों से सुशोभित, मरकत मणिमय नाना प्रकार के पत्रों से सहित, वैडूर्यरत्नमय फलों से युक्त और विद्रुम मूँगामय डालियों से संयुक्त भोजनाङ्गादि दश प्रकार के कल्पवृक्ष हैं। उन चारों वनों के मध्य में तीन कोट एवं तीन पीठ से संयुक्त तथा मणिमय डाली, पत्र, पुष्प और फलों से युक्त चार चैत्यवृक्ष शोभायमान होते हैं। उन चैत्यवृक्षों के मूल की चारों दिशाओं में पल्यङ्कासन एवं छत्र, चमरादि प्रातिहार्यों से युक्त जिनबिम्ब विराजमान हैं।

नन्दादिवापीनां मानस्तम्भानां च विशेषस्वरूपमाह—

णंदादीय तिमेहल तिवीढया भंति धम्मविहवावि।
पडिमाधिट्ठियमुड्ढा वणभूचउवीहिमज्झम्हि।।१०१४।।

नन्दादिकाः त्रिमेखलाः त्रिपीठका भान्ति धर्मविभवा अपि।
प्रतिमाधिष्ठितमूर्धानः वनभूचतुर्वीथीमध्ये।।१०१४।।

णंदा। प्रागुक्ता नन्दादिषोडशवाप्यस्त्रिमेखलायुक्ता भान्ति। वनभूप्रणिधि-चतुर्वीथीमध्ये प्रतिमाधिष्ठितमूर्धानः धर्मविभवा अपि मानस्तम्भा इत्यर्थः, त्रिपीठयुक्ता भान्ति[1]।।१०१४।।

।।समाप्तम्।।

नन्दादि वापियों और मानस्तम्भों का विशेष स्वरूप कहते हैं :—

गाथार्थ :—नन्दादि सोलह वापिकाएँ तीन कोटों से संयुक्त हैं तथा वन की भूमि के निकट चतुर्थ वीथी के मध्य में तीन पीठों युक्त जिनप्रतिमा से अधिष्ठित हैं, ऊर्ध्व (अग्र) भाग जिनका तथा जो धर्म रूपी वैभव से युक्त हैं ऐसे मानस्तम्भ शोभायमान होते हैं।।१०१४।।

विशेषार्थ :—पूर्वोक्त नन्दादि सोलह वापिकाएँ तीन कोटों से संयुक्त शोभायमान होती हैं और उन्हीं वनों की भूमि के निकट चतुर्थ वीथी के मध्य में, तीन पीठों से युक्त उपरिम भाग पर जिन प्रतिमा से अधिष्ठित तथा धर्म रूपी वैभव से युक्त मानस्तम्भ शोभायमान होते हैं।

।। समाप्त ।।

सिरिदेवी सुददेवी सव्वाण्हसणक्कुमारजक्खाणं।
रूवाणि य जिणपासे मंगलमट्ठविहमवि होदि।।९८८।।

उन जिनप्रतिमाओं के पार्श्व भाग में श्रीदेवी, श्रुतदेवी, सर्वाण्ह यक्ष और सानत्कुमार यक्ष के रूप अर्थात् प्रतिमाएँ हैं तथा अष्टमंगलद्रव्य भी होते हैं।

(त्रिलोकसार)

1. त्रिलोकसार पृ. 749 से 765 तक।

पांडुकवन के जिनमन्दिर

(तिलोयपण्णत्ती से)

तव्वणमज्झे चूलियपुव्वदिसाए जिणिंदपासादो।
उत्तरदक्खिणदीहो कोससयं पंचहत्तरी उदओ।।१८५५।।

कोस १०० । ७५ ।

पुव्वावरभाएसुं कोसा पण्णास तत्थ वित्थारो।
कोसद्धं अवगाढो अकट्टिमणिहणपरिहीणो।।१८५६।।

को ५० । गा १ । २।

एसो पुव्वाहिमुहो चउजोयण जेट्ठदारउच्छेहो।
दोजोयण तव्वासो वाससमाणो पवेसो य।।१८५७।।

४ । २ । २ ।

उत्तरदक्खिणभाए खुल्लयदाराणि दोण्णि चेट्ठंति।
तद्दलपरिमाणाणिं वरतोरणथंभजुत्ताणिं।।१८५८।।

२ । १ । १ ।

संखेंदुकुंदधवलो मणिकिरणकलप्पणासियतमोघो।
जिणवइपासादवरो तिहुवणतिलओ त्ति णामेणं।।१८५९।।

उस पांडुक वन के मध्य में चूलिका से पूर्व की ओर सौ कोस प्रमाण उत्तर-दक्षिण दीर्घ और पचहत्तर कोस प्रमाण ऊँचा जिनेन्द्रप्रासाद है।।१८५५।। कोस १०० । ७५।।

यह अकृत्रिम एवं अविनाशी (अनादिनिधन) जिनेन्द्रप्रासाद पूर्व-पश्चिम भागो में विस्तार में पचास योजन और अवगाह में अर्ध कोस मात्र है ।।१८५६।। को. ५० । अवगाह १/२ ।

यह जिनभवन पूर्वाभिमुख है । इसके ज्येष्ठ द्वार की उंचाई चार योजन, विस्तार दो योजन और प्रवेश भी विस्तार के समान दो योजन मात्र है ।।१८५७।। ४ । २ । २ ।

उत्तर-दक्षिण भाग में दो क्षुद्र द्वार स्थित हैं, जो ज्येष्ठ द्वार की अपेक्षा अर्धभागप्रमाण उंचाई आदि से सहित और उत्तम तोरणस्तम्भों से युक्त हैं ।।१८५८।। । २ । १ । १ ।

शंख, चंद्रमा अथवा कुंदपुष्प के समान धवल और मणियों के किरणकलाप से अंधकार समूह को नष्ट करने वाले यह उत्तम जिनेन्द्रप्रासाद 'त्रिभुवनतिलक' नाम से विख्यात हैं ।।१८५९।।

दारसरिच्छुस्सेहा वज्जकवाडा विचित्तवित्थिण्णा।
जमला तेसुं सव्वे जलमरगयकक्केयणादिजुदा।।१८६०।।
विम्हयकररूवाहिं णाणाविहसालभंजियाहिं जुदा ।
पणवण्णरयणरइदा थंभा तस्सिं विरायंति।।१८६१।।
भित्तीओ विविहाओ णिम्मलवरफलिहरयणरइदाओ।
चित्तेहिं विचित्तेहिं विम्हयजणणेहिं जुत्ताओ।।१८६२।।
थंभाण मज्झभूमी समंतदो पंचवण्णरयणमई ।
तणुमणणयणाणंदणसंजणणी णिम्मला विरजा।।१८६३।।
बहुविहविदाणएहिं मुत्ताहलदामचामरजुदेहिं ।
वररयणभूसणेहिं संजुत्तो सो जिणिंदपासादो।।१८६४।।
वसहीए गब्भगिहे देवच्छंदो दुजोयणुच्छेहो ।
इगिजोयणवित्थारो चउजोयणदीहसंजुत्तो।।१८६५।।

जो २ । १ । ४ ।

सोलसकोसुच्छेहं समचउरस्सं तदद्धवित्थारं ।
लोयविणिच्छयकत्ता देवच्छंदं परूवेइ।।१८६६।।

को १६ । ८ । पाठान्तरम् !

इन द्वारों में द्वारों के समान उंचाई से सहित और विचित्र एवं विस्तीर्ण सब युगल वज्रकपाट जलकान्त, मरकत और कर्केतनादि मणिविशेषों से संयुक्त हैं ।।१८६०।।

उस जिनेन्द्रप्रासाद में विस्मयजनक रूपवाली नाना प्रकार की शालभंजिकाओं से युक्त और पांच वर्ण के रत्नों से रचे गये स्तम्भ विराजमान हैं ।।१८६१।।

निर्मल एवं उत्तम स्फटिक रत्नों से रची गई विविध प्रकारकी भित्तियां विचित्र और विस्मयजनक चित्रों से युक्त हैं ।।१८६२।।

खम्भों की मध्यभूमि चारों ओर पांच वर्ण के रत्नों से निर्मित, शरीर, मन एवं नेत्रों को आनन्ददायक, निर्मल और धूलि से रहित है।।१८६३।।

वह जिनेन्द्रप्रासाद मोतियों की माला तथा चामरों से युक्त एवं उत्तम रत्नों से विभूषित बहुत प्रकार के वितानों से संयुक्त हैं।।१८६४।।

वसतिका में गर्भगृह के भीतर दो योजन ऊंचा, एक योजन विस्तार वाला और चार योजन प्रमाण लम्बाई से संयुक्त देवच्छंद है ।। १८६५ ।। योजन २ । १ । ४ ।

लोकविनिश्चय के कर्ता देवच्छंद को समचतुष्कोण सोलह कोस ऊंचा और इससे आधे विस्तार से संयुक्त बतलाते हैं ।। १८६६ ।। को. १६ । ८ । पाठान्तर

लंबंतकुसुमदामो पारावयमोरकंठवण्णणिहो ।
मरगयपवालवण्णो कक्केयणइंदणीलमओ।।१८६७।।
चोसट्ठकमलमालो चामरघंटापयाररमणिज्जो ।
गोसीरमलयचंदणकालागरूधूवगंधड्ढो ।।१८६८।।
भिंगारकलसदप्पणणाणाविह धयवडेहिं सोहिल्लो ।
देवच्छंदो रम्मो जलंतवररयणदीवजुदो।।१८६९।।
अट्ठुत्तरसयसंखा जिणवरपासादमज्झभायम्मि ।
सिंहासणाणि तुंगा सपायपीढा य फलिहमया।।१८७०।।
सिंहासणाण उवरिं जिणपडिमाओ अणाइणिहणाओ।
अट्ठुत्तरसयसंखा पणसयचावाणि तुंगाओ।।१८७१।।
भिण्णिंदणीलमरगयकुंतलभूवग्गदिण्णसोहाओ।
फलिहिंदणीलणिम्मिदधवलासिदणेत्तजुयलाओ।।१८७२।।
वज्जमयदंतपंतीपहाओ पल्लवसरिच्छअधराओ ।
हीरमयवरणहाओ पउमारुणपाणिचरणाओ।।१८७३।।

यह रमणीय देवच्छंद लटकती हुई पुष्पमालाओं से सहित, कबूतर व मोर के कण्ठगत वर्ण के सदृश मरकत व प्रवाल जैसे वर्ण से संयुक्त, कर्केतन एवं इन्द्रनील मणियों से निर्मित, चौंसठ कमलमालाओं से शोभायमान नाना प्रकार के चँवर व घंटाओं से रमणीय, गोशीर, मलयचन्दन एवं कालागरू धूप के गन्ध से व्याप्त, झारी, कलश दर्पण व नाना प्रकार की ध्वजा पताकाओं से सुशोभित और देदीप्यमान उत्तम रत्नदीपकों से युक्त हैं।।१८६७-१८६९।।

जिनेन्द्रप्रासाद के मध्य भाग में पादपीठों से सहित स्फटिकमणिमय एक सौ आठ उन्नत सिंहासन हैं।।१८७०।।

सिंहासनों के ऊपर पांचसौ धनुषप्रमाण ऊंची एक सौ आठ अनादिनिधन जिनप्रतिमायें विराजमान हैं।।१८७१।।

ये जिनेन्द्र प्रतिमायें भिन्न इन्द्रनीलमणि व मरकतमणिमय कुंतल तथा भ्रुकुटियों के अग्रभाग से शोभा को प्रदान करने वाली, स्फटिकमणि और इन्द्रनीलमणि से निर्मित धवल व कृष्ण नेत्रयुगल से सहित, वज्रमय दन्तपंक्ति की प्रभा से संयुक्त, पल्लव के सदृश अधरोष्ठ से सुशोभित, हीरे से निर्मित उत्तम नखों से विभूषित कमल के समान लाल हाथ, पैरों से विशिष्ट, एक हजार आठ व्यंजनसमूह से सहित और बत्तीस लक्षणों से युक्त हैं।।१८७२-१८७४।।

अट्ठब्भहियसहस्सप्पमाणवंजणसमूहसहिदाओ ।
बत्तीसलक्खणेहिं जुत्ताओ जिणेसपडिमाओ।।१८७४।।
जीहासहस्सजुगजुदधरणिंदसहस्सकोढिकोडीओ।
ताणं ण वण्णणेसुं सक्काओ माणुसाण का सत्ती।।१८७५।।
पत्तेक्कं सव्वाणं चउसट्ठी देवमिहुणपडिमाओ
वरचामरहत्थाओ सोहंति जिणिंदपडिमाणं।।१८७६।।
छत्तत्तयादिजुत्ता पडियंकासणसमण्णिदा णिच्चं।
समचउरस्सायारा जंयति जिणणाहपडिमाओ।।१८७७।।
खेयरसुररायेहिं भत्तीए णमियचलणजुगलाओ ।
बहुविहविभूसिदाओ जिणपडिमाओ णमंसामि।।१८७८।।
ते सव्वे उवयरणा घंटापहुदीओ तह य दिव्वाणिं।
मंगलदव्वाणि पुढं जिणिंदपासेसु रेहंति।।१८७९।।
भिंगारकलसदप्पणचामरधयवियणछत्तसुपयट्ठा ।
अट्ठुत्तरसयसंखा पत्तेक्कं मंगला तेसुं।।१८८०।।
सिरिसुददेवीण तहा सव्वाण्हसणक्कुमारजक्खाणं।
रूवाणिं पत्तेक्कं पडि वररयणाइ रइदाणिं।।१८८१।।

जब सहस्रों युगलजिह्वाओं से युक्त धरणेन्द्रों की सहस्त्रों हजार कोडाकोडियां भी उन प्रतिमाओं के वर्णन करने में समर्थ नहीं हो सकतीं, तब मनुष्यों की तो शक्ति ही क्या है।।१८७५।।

सब जिनेन्द्र प्रतिमाओं में से प्रत्येक प्रतिमा के समीप हाथ में उत्तम चँवरों को लिये हुए चौंसठ देवयुगलों की प्रतिमायें शोभायमान हैं ।। १८७६ ।।

तीन छत्रादि से सहित पल्यंकासन से समन्वित और समचतुरस्र आकार वाली वे जिननाथ प्रतिमायें नित्य जयवन्त हैं ।। १८७७ ।।

जिनके चरणयुगलों को विद्याधर और देवेन्द्र भक्ति से नमस्कार करते हैं, उन बहुत प्रकार से विभूषित जिनप्रतिमाओं को नमस्कार करता हूँ ।। १८७८ ।।

घंटाप्रभृति वे सब उपकरण तथा दिव्य मंगलद्रव्य पृथक् पृथक् जिनेन्द्रप्रतिमाओं के पास में सुशोभित होते हैं ।।१८७९।।

भृंगार, कलश, दर्पण, चँवर, ध्वजा, बीजना, छत्र और सुप्रतिष्ठ ये आठ मंगलद्रव्य हैं। इनमें से प्रत्येक वहां एक सौ आठ होते हैं ।। १८८० ।।

प्रत्येक प्रतिमा के प्रति उत्तम रत्नादिकों से रचित श्रीदेवी, श्रुतदेवी तथा सर्वाण्ह व सनत्कुमार यक्षों की मूर्तियां रहती हैं ।। १८८१ ।।

देवच्छंदस्स पुरो णाणाविहरयणकुसुममालाओ ।
फुरिदक्किरणकलाओ लंबताओ विरायंते।।१८८२।।
बत्तीससहस्साणिं कंचणरजदेहिं णिम्मिदा विउला।
सोहंति पुण्णकलसा खचिदा वररयणणियरेहिं।।१८८३।।
चउवीससहस्साणिं धूवघडा कणयरजदणिम्मविदा।
कप्पूरागुरूचंदणपहुदिसमुद्धंतधूवगंधड्ढा ।।१८८४।।
भिंगाररयणदप्पणबुब्बुदवरचमरचक्क कयसोहं।
घंटापडायपउरं जिणिंदभवणं णिरूवमाणं तं।।१८८५।।
जिणपासादस्स पुरो जेट्ठद्वारस्स दोसु पासेसुं ।
पुह चत्तारिसहस्सा लंबंते रयणमालाओ।।१८८६।।
४००० ।
ताणं पि अंतरेसुं अकट्टिमाओ फुरंतकिरणादी।
बारससहस्ससंखा लंबते कणयमालाओ।।१८८७।।
।१२००० ।
अट्ठट्ठसहस्साणिं धूवघडा दारअग्गभूमीसुं ।
अट्ठट्ठसहस्साओ ताण पुरे कणयमालाओ।।१८८८।।
। ८००० ।

देवच्छंद के सन्मुख नाना प्रकार के रत्न और पुष्पों की मालायें प्रकाशमान किरणसमूह से सहित लटकती हुई विराजमान हैं ।। १८८२ ।।

सुवर्ण एवं रजत से निर्मित और उत्तम रत्नसमूहों से खचित बत्तीस हजार प्रमाण विशाल पूर्ण कलश सुशोभित हैं ।। १८८३ ।।

कर्पूर, अगुरु और चन्दनादिक से उत्पन्न हुई धूप के गन्ध से व्याप्त और सुवर्ण एवं चांदी से निर्मित चौबीस हजार धूपघट हैं ।। १८८४ ।।

झारी, रत्नदर्पण, बुद्बुद उत्तम चमर और चक्र से शोभायमान तथा प्रचुर घंटा और पताकाओं से युक्त वह जिनेन्द्रभवन अनुपम है ।। १८८५ ।।

जिनप्रासाद के सन्मुख ज्येष्ठ द्वार के दोनों पार्श्व भागों में पृथक् पृथक् चार हजार रत्नमालायें लटकती हैं।।१८८६।। ४००० ।

इनके भी बीच में प्रकाशमान किरणादि से सहित बारह हजार अकृत्रिम सुवर्णमालायें लटकती हैं ।। १८८७।। १२००० ।

द्वार की अग्रभूमियों मे आठ आठ हजार धूपघट और उन धूपघटों के आगे आठ आठ हजार सुवर्णमालायें हैं।।१८८८।। ८००० ।

पुह खुल्लयदारेसुं ताणद्धं होंति रयणमालाओ ।
कंचणमालाओ तह धूवघढा कणयमालाओ।।१८८९।।
चउवीससहस्साणिं जिणपुरपुट्ठीए कयणमालाओ।
ताणं च अंतरेसुं अट्ठसहस्साणि रयणमालाओ।।१८९०।।
मुहमंडवो हि रम्मो जिणवरभवणस्स अग्गभागम्मि।
सोलसकोसुच्छेहो सयं च पण्णासदीहवासाणिं।।१८९१।।
कोसद्धो ओगाढ़ो णाणावररयणणियरणिम्मविदो।
धुव्वंतधयवडाओ किं बहुणा सो णिरूवमाणो।।१८९२।।
मुहमंडवस्स पुरदो अवलोयणमंडओ परमरम्मो।
अधिया सोलसकोसा उदओ रूंदों सयं सयं दीहं।।१८९३।।

१६। १०० ।

णियजोगुच्छेहजुदो तप्पुरदो चेट्ठदे अधिट्ठाणो।
कोसासीदी वासो तेत्तियमेदस्स दीहत्तं।।१८९४।।

८० ।

क्षुद्र द्वारों में पृथक् पृथक् इससे आधी रत्नमालायें, कंचनमालायें धूपघट तथा सुवर्णमालायें हैं ।।१८८९।।

जिनपुर के पृष्ठभाग में चौबीस हजार कनकमालायें और इनके बीच में आठ हजार रत्नमालायें हैं।।१८९०।।

जिनेन्द्रभवन के अग्रभाग में सोलह कोस ऊंचा, सौ कोस लम्बा और पचास कोस प्रमाण विस्तार से युक्त रमणीय मुखमण्डप है ।।१८९१।।

वह मुखमण्डप आधे कोस अवगाह से युक्त, नाना प्रकार के उत्तम रत्नसमूहों से निर्मित और फहराती हुई ध्वजा-पताकाओं से सहित है। बहुतवर्णन से क्या, वह मण्डप निरूपम है ।। १८९२ ।।

मुखमण्डप के आगे परमरमणीय अवलोकनमण्डप है, जो सोलह कोस से अधिक ऊंचा, सौ कोस विस्तृत और सौ कोस लंबा है ।।१८९३।। १६ ।। १०० ।

उसके आगे अपने योग्य उचांई से युक्त अधिष्ठान स्थित है । इसका विस्तार अस्सी कोस और लम्बाई भी इतनी ही है ।।१८९४ ।। ८० ।

तस्स बहुमज्झदेसे सभापुरं दिव्वरयणवररइदं।
अधिया सोलस उदओ कोसा चउसट्ठि दीहवासाणिं।।१८९५।।

१६। ६४ । ६४ ।

सीहासणभद्दासणवेत्तासणपहुदिविविहपीढाणिं ।
वररयणणिम्मिदाणिं सभापुरे परमरम्माणिं।।१८९६।।
होदि सभापुरपुरदो पीढो चालीसकोसउच्छेहो।
णाणाविहरयणमओ उच्छण्णो तस्स वासउवएसो।।१८९७।।

४०को

पीढस्स चउदिसासुं बारस वेदीओ होंति भूमियले।
वरगोउराओ तेत्तियमेत्ताओ पीढउड्ढम्मि।।१८९८।।
पीढोवरि बहुमज्झे समवट्टो चेट्ठदे रयणथूहो ।
वित्थारूच्छेहेहिं कमसो कोसाणि दोहि चउसट्ठी।।१८९९।।

को ६४ । ६४ ।

तत्तो वि छत्तसहिओ कणयमओ पज्जलंतमणिकिरणो।
थूहो अणाइणिहणो जिणसिद्धपडिमपडिपुण्णो।।१९००।।

उसके बहुमध्य भाग में उत्तम दिव्य रत्नों से रचा गया सभापुर है, जिसकी ऊँचाई सोलह कोस से अधिक और लम्बाई व विस्तार चौंसठ कोस प्रमाण है ।।१८९५।।

१६ । ६४ । ६४ ।

सभापुर मे सिंहासन, भद्रासन और वेत्रासनप्रभृति विविध पीठ उत्तम रत्नों से निर्मित परम रमणीय हैं।।१८९६।।

सभापुर के आगे चालीस कोस ऊंचा और नाना प्रकार के रत्नों से निर्मित पीठ है। इसके विस्तार का उपदेश नष्ट हो गया है।।१८९७।। ४० ।

पीठ के चारों ओर उत्तम गोपुरों से युक्त बारह वेदियां पृथ्वीतल पर और इतनी ही पीठ के ऊपर हैं।।१८९८।।

पीठ के ऊपर बहुमध्य भाग में समवृत्त रत्नस्तूप स्थित है, जो क्रम से चौंसठ कोस प्रमाण विस्तार व ऊँचाई से सहित है।।१८९९।। को. ६४ । ६४ ।

इसके भी आगे छत्र से सहित, देदीप्यमान मणिकिरणों से विभूषित और जिन व सिद्ध प्रतिमाओं से परिपूर्ण अनादिनिधन सुवर्णमय स्तूप है ।।१९००।।

तस्स य पुरदो पुरदो अट्ठत्थूहा सरिच्छवासादी ।
ताणं अग्गे दिव्वं पीढं चेट्ठेदि कणयमयं।।१९०१।।
तं रूंदायामोहिं दोण्णि सया जोयणाणि पण्णासा।
पीढस्स उदयमाणे उवएसो अम्ह उच्छण्णो।।१९०२।।
२५० । २५० । ० ।
पीढस्स चउदिसासुं बारस वेदीओ होंति भूमियले।
वरगोउराओ तेत्तियमेत्ताओ पीढउड्ढम्मि।।१९०३।।
पीढस्सुवरिमभागे सोलसगव्वूदिमेत्तउच्छेहो।
सिद्धंतो णामेणं चेत्तदुमो दिव्ववरतेओ।।१९०४।।
को १६ ।
खंधुच्छेहो कोसा चत्तारो बहलमेक्कगव्वूदी।
बारसकोसा साहादीहत्तं चेय विच्चालं।।१९०५।।
को ४ । १ । १२ । १२ ।
इगिलक्खं चालीसं सहस्सया इगिसयं च वीसजुदं।
तस्स परिवाररूक्खा पीढोवरि तप्पमाणधरा।।१९०६।।
१४०१२० ।

इसके भी आगे समान विस्तारादि से सहित आठ स्तूप हैं। इन स्तूपों के आगे सुवर्णमय दिव्य पीठ स्थित है ।। १९०१ ।।

इस पीठ का विस्तार व लंबाई दो सौ पचास योजनप्रमाण है। इसकी ऊँचाई के प्रमाण का उपदेश हमारे लिये नष्ट हो गया है।।१९०२।। २५० । २५० ।०।

पीठ के चारों ओर उत्तम गोपुरों से युक्त बारह वेदियां भूमितलपर और इतनी ही पीठ के ऊपर हैं।।१९०३।।

पीठ के उपरिम भाग पर सोलह कोस प्रमाण ऊंचा दिव्य व उत्तम तेज को धारण करने वाला सिद्धार्थ नामक चैत्यवृक्ष है ।। १९०४ ।। को. । १६ ।

चैत्यवृक्ष के स्कन्ध की ऊँचाई चार कोस, बाहल्य एक कोस, और शाखाओं की लम्बाई व अन्तराल बारह कोस प्रमाण है।।१९०५।। को. ४ । १ । १२। १२।

पीठ के ऊपर इसी प्रमाण को धारण करने वाले एक लाख चालीस हजार एक सौ बीस इसके परिवार वृक्ष हैं।।१९०६।। १४०१२०।

विविहवररयणसाहा मरगयपत्ता य पउमरायफला ।
चामीयररजदमयाकुसुमजुदा सयलकालं ते।।१९०७।।
सव्वे अणाइणिहणा पुढविमया दिव्वचेत्तवररूक्खा ।
जीवुप्पत्तिलयाणं कारणभूदा सइं भवंति।।१९०८।।
रूक्खाण चउदिसासुं पत्तेक्कं विविहरयणरइदाओ ।
जिणसिद्धप्पडिमाओ जयंतु चत्तारि चत्तारि।।१९०९।।
चेत्ततरूणं पुरदो दिव्वं पीढं हवेदि कणयमयं ।
उच्छेहदीहवासा तस्स य उच्छण्णउवएसा ।। १९१०
पीढस्स चउदिसासुं बारस वेदी य होंति भूमियले ।
चरिअट्टालयगोउरदुवारतोरणविचित्ताओ ।। १९११
चउजोयणउच्छेहा उवरिं पीढस्स कणयवरखंभा ।
विविहमणिणियरखचिदा चामरघंटापयारजुदा।।१९१२।।
सव्वेसुं थंभेसुं महाधया विविहवण्णरमणिज्जा।
णामेण महिंदधया छत्तत्तयसिहरसोहिल्ला।।१९१३।।

ये वृक्ष विविध प्रकार के उत्तम रत्नों से निर्मित शाखाओं, मरकतमणिमय पत्तों, पद्मरागमणिमय फलों और सुवर्ण एवं चाँदी से निर्मित पुष्पों से सदैव संयुक्त रहते हैं।।१९०७ ।।

ये सब उत्तम दिव्य चैत्यवृक्ष अनादिनिधन और पृथ्वीरूप होते हुए जीवों की उत्पत्ति और विनाश के स्वयं कारण होते हैं ।। १९०८ ।।

इन वृक्षों में प्रत्येक वृक्ष के चारों ओर विविध प्रकार के रत्नों से रचित चार चार जिन और सिद्धों की प्रतिमायें विराजमान हैं। ये प्रतिमायें जयवन्त होवें ।। १९०९ ।।

चैत्यवृक्षों के आगे सुवर्णमय दिव्य पीठ है। इसकी ऊँचाई, लम्बाई और विस्तारादिक का उपदेश नष्ट हो गया है ।। १९१० ।।

पीठ के चारों ओर भूमितल पर मार्ग व अट्टालिकाओं, गोपुरद्वारों और तोरणों से विचित्र बारह वेदियां हैं।।१९११।।

पीठ के ऊपर विविध प्रकार के मणि समूह से खचित और अनेक प्रकार के चमर व घंटाओं से युक्त चार योजन ऊंचे सुवर्णमय खम्भे हैं ।।१९१२।।

सब खम्भों के ऊपर अनेक प्रकार के वर्णों से रमणीय और शिखररूप तीन छत्रों से सुशोभित महेन्द्र नामक महाध्वजायें हैं।।१९१३।।

पुरदो महाधयाणं मकरप्पमुहेहिं मुक्कसलिलाओ।
चत्तारो वावीओ कमलुप्पलकुमुदछण्णाओ।।१९१४।।
पण्णासकोसउदया कमसो पणुवीस रूंददीहत्ता ।
दस कोस अवगाढा वावीओ वेदियादिजुत्ताओ।।१९१५।।

को ५० । १०० । गा १० ।

वावीणं बहुमज्झे चेट्ठदि एक्को जिणिंदपासादो।
विप्फुरिदरयणकिरणो किं बहुसो सो णिरूवमाणो।।१९१६।।
तत्तो दहाउ पुरदो पुव्वुत्तरदक्खिणेसु भागेसुं ।
पासादा रयणमया देवाणं कीडणा होंति।।१९१७।।
पण्णासकोसउदया कमसो पणुवीस रूंददीहत्ता।
धूवघडेहिं जुत्ता ते णिलया विविहवण्णधरा।।१९१८।।

को ५० । २५ । २५ ।

वरवेदियाहिं रम्मा वरकंचणतोरणेहिं परियरिया ।
वरवज्जणीलमरगयणिम्मिदभित्तीहिं सोहंते।।१९१९।।

महाध्वजाओं के आगे मगर आदि जल जन्तुओं से रहित जल वाली और कमल, उत्पल व कुमुदों से व्याप्त चार वापिकायें हैं ।। १९१४ ।।

वेदिकादि से सहित वापिकायें प्रत्येक पचास कोस प्रमाण विस्तार से युक्त, इससे दुगुनी अर्थात् सौ कोस लम्बी और दश कोस गहरी हैं।।१९१५।।

को. ५० । १०० । ग. १० ।

वापिकायों के बहुमध्य भाग में प्रकाशमान रत्नकिरणों से सहित एक जिनेन्द्रप्रासाद स्थित है। बहुत कथन से क्या, वह जिनेन्द्रप्रासाद निरूपम है ।।१९१६।।

अनन्तर वापियों के आगे पूर्व उत्तर और दक्षिण भागों में देवों के रत्नमय क्रीडाभवन हैं ।। १९१७ ।।

विविध वर्णों को धारण करने वाले वे भवन पचास कोस ऊंचे, क्रम से पच्चीस कोस विस्तृत और पच्चीस ही कोस लम्बे तथा धूपघटों से संयुक्त हैं।।१९१८।।

को. ५० । २५ । २५ ।

उत्तम वेदिकाओं से रमणीय और उत्तम सुवर्णमय तोरणों से युक्त वे भवन उत्कृष्ट वज्र, नीलमणि और मरकत मणियों से निर्मित भित्तियों से शोभायमान हैं ।। १९१९ ।।

ताण भवणाण पुरदो तेत्तियमाणेण दोण्णि पासादा।
धुव्वंतधयवदाया फुरंतवररयणकिरणोहा।।१९२०।।

५० । २५ । २५ ।

तत्तो विचित्तरूवा पासादा दिव्वरयणणिम्मविदा।
कोससयमेत्तउदया कमेण पण्णासदीहवित्थिण्णा।।१९२१।।
जे जेट्ठदारपुरदो दिव्वमुहमंडवादि कहिदा य ।
ते खुल्लयदारेसुं हवंति अद्धप्पमाणेंहि।।१९२२।।
तत्तो परदो वेदी एदाणिं वेढिदूण सव्वाणिं ।
चेट्ठदि चरिअट्टालयगोउरदोरहिं कणयमई।।१९२३।।
तीए परदो वरिया तुंगेहिं कणयरयणथंभेहिं ।
चेट्ठंति चउदिसासुं दसप्पयारा धयणिबंधा।।१९२४।।
हरिकरिवसहखगाहिवसिहिससिरविहंसकमलचक्कधया।
अट्ठुत्तरसयसंखा पत्तेक्कं तेत्तिया खुल्ला।।१९२५।।
चामीयरवरवेदी एदाणिं वेढिदूण चेट्ठेदि ।
विप्फुरिदरयणकिरणा चउगोउरदाररमणिज्जा।।१९२६।।

उन भवनों के आगे इतने ही प्रमाण से संयुक्त फहराती हुई ध्वजा-पताकाओं से सहित और प्रकाशमान उत्तम रत्नों के किरण समूह से सुशोभित दो प्रासाद हैं।।१९२०।।

५० ।। २५ । २५ ।

इसके आगे सौ कोस ऊंचे क्रम से पचास कोस लम्बे-चौड़े दिव्य रत्नों से निर्मित विचित्र रूप वाले प्रासाद हैं ।। १९२१ ।।

ज्येष्ठ द्वार के आगे जो दिव्य मुखमण्डपादिक कहे जा चुके हैं, वे आधे प्रमाण से सहित क्षुद्र द्वारो में भी हैं।।१९२२।।

इसके आगे मार्ग, अट्टालिकाओं और गोपुरद्वारों से सहित सुवर्णमयी वेदी इन सबको वेष्टित करके स्थित है।।१९२३।।

इस वेदी के आगे चारों दिशाओं में सुवर्ण एवं रत्नमय उन्नत खम्भों से सहित दश प्रकार की श्रेष्ठ ध्वजपंक्तियाँ स्थित हैं ।।१९२४।।

सिंह, हाथी, बैल, गरूड़, मोर, चन्द्र, सूर्य, हंस, कमल और चक्र, इन चिह्नों से युक्त ध्वजाओं में से प्रत्येक एक सौ आठ और इतनी ही क्षुद्रध्वजायें हैं ।।१९२५।।

प्रकाशमान रत्न किरणों से संयुक्त और चार गोपुरद्वारों से रमणीय सुवर्णमय उत्तम वेदी इनको वेष्टित करके स्थित है।।१९२६।।

बे कोसाणिं तुंगा वित्थारेणं धणूणि पंचसया ।
विप्फुरिदधयवदाया फडिहमयाणेयवरभित्ती।।१९२७।।

को २ । दं ५०० ।

तीए परदो दसविहकप्पतरू ते समंतदो होंति ।
जिणभवणेसुं तिहुवणविम्हयजणणेहिं रूवेहिं।।१९२८।।
गोमेदयमयखंधा कंचणमयकुसुमणियररमणिज्जा।
मरगयमयपत्तधरा विद्दुमवेरुलियपउमराय फला।।१९२९।।
सव्वे अणाइणिहणा अकट्टिमा कप्पपायवपयारा।
मूलेसु चउदिसासुं चत्तारि जिणिंदपडिमाओ।।१९३०।।
तप्फलिहवीहिमज्झे वेरुलियमयाणि माणथंभाणिं।
वीहिं पडि पत्तेयं विचित्तरूवाणि रेहंति।।१९३१।।
चामरघंटाकिंकिणिकेतणपहुदीहिं उवरि संजुत्ता।
सोहंति माणथंभा चउवेदीदारतोरणेहिं जुदा।।१९३२।।
ताणं मूले उवरिं जिणिंदपडिमाओ चउदिसंतेसुं ।
वररयणणिम्मिदाओ जयंतु जयथुणिदचरिदाओ।।१९३३।।

यह वेदी दो कोस ऊंची, पांच सौ धनुष चौड़ी, फहराती हुई ध्वजा – पताकाओं से सहित और स्फटिक मणिमय अनेक उत्तम भित्तियों से संयुक्त है।।१९२७।।

को. २ । द. ५०० ।

इसके आगे जिनभवनों में चारों ओर तीनों लोकों को आश्चर्य उत्पन्न करने वाले स्वरूप से संयुक्त वे दश प्रकार के कल्पवृक्ष हैं ।। १९२८ ।।

सब प्रकार के कल्पवृक्ष गोमेदमणिमय स्कन्ध से सहित, सुवर्णमय कुसुमसमूह से रमणीय मरकतमणिमय पत्तों को धारण करने वाले, मूंगा, नीलमणि एवं पद्मरागमणिमय फलों से संयुक्त, अकृत्रिम और अनादिनिधन हैं। इनके मूल में चारों ओर चार जिनेन्द्रप्रतिमायें विराजमान हैं।। १९२९-१९३०।।

उन स्फटिकमणिमय वीथियों के मध्य में से प्रत्येक वीथी के प्रति विचित्र रूपवाले वैडूर्यमणिमय मानस्तम्भ सुशोभित हैं ।। १९३१ ।।

चार वेदीद्वार और तोरणों से युक्त ये मानस्तम्भ ऊपर चँवर, घंटा, किंकिणी और ध्वजा इत्यादि से संयुक्त होते हुए शोभायमान होते हैं ।। १९३२ ।।

इन मानस्तम्भों के नीचे और चारों दिशाओं में विराजमान, उत्तम रत्नों से निर्मित और जग से कीर्तित चरित्र से संयुक्त जिनेन्द्रप्रतिमाएँ जयवन्त होवें।।१९३३।।

कप्पमहिं परिवेढिय साला वररयणणियरणिम्मविदा।
चेट्ठदि चरियट्टालयणाणाविहधयवडाडोवा।१९३४।।
चूलियदक्खिणभाए पच्छिमभायम्मि उत्तरविभागे।
एक्केक्कं जिणभवणं पुव्वम्हि व वण्णणेहिं जुदं।।१९३५।।
एवं संखेवेणं पंडुगवणवण्णणाओ भणिदाओ ।
वित्थारवण्णणेसुं सक्को वि ण सक्कदे तस्स[1]।।१९३६।।

भवनवासी देवों के भवनों में चैत्यवृक्ष एवं जिनमन्दिर

तेसिं चउसु दिसासुं जिणदिट्ठपमाणजोयणे गंता।
मज्झम्मि दिव्ववेदी पुह पुह वेट्ठेदि एक्केक्का।।२८।।
दो कोसा उच्छेहा वेदीणमकट्टिमाण सव्वाणं ।
पंचसयाणिं दंडा वासो वररयणछण्णाणं।।२९।।
गोउरदारजुदाओ उवरिम्मि जिणिंदगेहसहिदाओ ।
भवणसुररक्खिदाओ वेदीओ ताओ सोहंति।।३०।।

मार्ग व अट्टालिकाओं से युक्त, नाना प्रकार की ध्वजा-पताकाओं के आटोप से सुशोभित और श्रेष्ठ रत्न समूह से निर्मित कोट इस कल्पमही को वेष्टित करके स्थित है।।१९३४ ।।

चूलिका के दक्षिण, पश्चिम और उत्तर भाग में भी पूर्वदिशावर्ती जिनभवन के समान वर्णनों से संयुक्त एक एक जिनभवन हैं।।१९३५।।

इस प्रकार यहां संक्षेप से पाण्डुक वन का वर्णन किया गया है । उसका विस्तार से वर्णन करने के लिये तो इन्द्र भी समर्थ नहीं हो सकता है ।। १९३६ ।।

भवनवासी देवों के भवनों में चैत्यवृक्ष एवं जिनमन्दिर

उन भवनों की चारों दिशाओं मे जिनभगवान् से उपदिष्ट योजन प्रमाण जाकर एक एक दिव्य वेदी (कोट) पृथक्-पृथक् उन भवनों को मध्य में वेष्टित करती है ।। २८ ।।

उत्तमोत्तम रत्नों से व्याप्त इन सब अकृत्रिम वेदियों की ऊँचाई दो कोस और विस्तार पांच सौ धनुष प्रमाण होता है ।। २९ ।।

गोपुरद्वारों से युक्त और उपरिम भाग में जिनमन्दिरों से सहित वे वेदियां भवनवासी देवों से रक्षित होती हुई सुशोभित होती हैं ।। ३० ।।

---

1. तिलोयपण्णत्ती पृ. 384 से 393 तक।

तब्बाहिरे असोयंसत्तच्छदचंपचूदवण पुण्णा ।
णियणाणातरुजुत्ता चेट्ठंति चेत्ततरूसहिदा।।३१।।
चेत्तदुमत्थलरूंदं दोण्णि सया जोयणाणि पण्णासा।
चत्तारो मज्झम्मि य अंते कोसद्धमुच्छेहो।।३२।।
छद्दोभूमुहरूंदा चउजोयणउच्छिदाणि पीढाणि।
पीढोवरि बहुमज्झे रम्मा चेट्ठंति चेत्तदुमा।।३३।।

६ । २ । ४ ।

पत्तेक्कं रूक्खाणं अवगाढं कोसमेक्कमुद्दिट्ठं ।
जोयण खंदुच्छेहो साहादीहत्तणं च चत्तारि ।। ३४।।

को १ । जो १ । ४।

विविहवररयणसाहा विचित्तकुसुमोवसोभिदा सव्वे।
वरमरगयवरपत्ता दिव्वतरू ते विरायंति।।३५।।
विविहंकुरूचेंचइया विविहफला विविहरयणपरिणामा।
छत्तादिछत्तजुत्ता घंटाजालादिरमणिज्जा।।३६।।

वेदियों के बाह्य भाग में चैत्यवृक्षों से सहित और अपने नाना वृक्षों से युक्त पवित्र अशोक वन, सप्तच्छदवन, चंपकवन और आम्रवन स्थित हैं ।। ३१ ।।

चैत्यवृक्षों के स्थल का विस्तार दो सौ पचास योजन तथा ऊँचाई मध्य में चार योजन और अन्त में अर्ध कोस प्रमाण होती है ।। ३२ ।।

पीठों की भूमि का विस्तार छह योजन, मुख का विस्तार दो योजन, और ऊँचाई चार योजन होती है। इन पीठों के ऊपर बहुमध्यभाग में रमणीय चैत्यवृक्ष स्थित होते हैं।।३३।।

भूविस्तार ६, मु. वि. २, उंचाई ४ यो. ।

प्रत्येक वृक्ष का अवगाढ़ एक कोस, स्कंध का उत्सेध एक योजन और शाखाओं की लंबाई चार योजन प्रमाण कही गयी है ।। ३४ ।।

अवगाढ़ को. १, स्कन्ध की ऊँचाई यो. १ शाखाओं की लंबाई यो. ४ ।

वे सब दिव्य वृक्ष विविध प्रकार के उत्तम रत्नों की शाखाओं से युक्त, विचित्र पुष्पों से अलंकृत और उत्कृष्ट मरकत मणिमय उत्तम पत्रों से व्याप्त होते हुए अतिशय शोभा को प्राप्त हैं ।। ३५ ।।

विविध प्रकार के अंकुरों से मंडित, अनेक प्रकार के फलों से युक्त, नाना प्रकार के रत्नों से निर्मित, छत्र के ऊपर छत्र से संयुक्त, घंटाजालादि से रमणीय और आदि-अन्त से

आदिणिहणेण हीणा पुढविमया सव्वभवणचेत्तदुमा ।
जीवुप्पत्तिलयाणं होंति णिमित्ताणि ते णियमा ।।३७।।
चेत्ततरूणं मूले पत्तेक्कं चउदिसासु पंचेव
चेट्ठंति जिणप्पडिमा पलियंकठिया सुरेहिं महणिजा।।३८।।
चउतोरणाभिरामा अट्ठमहामंगलेहि सोहिल्ला ।
वररयणणिम्मिदोहिं माणत्थंभेहि अइरम्मा ।।३९।।

।। वेदीवण्णणा गदा ।।

वेदीणं बहुमज्झे जोयणसयमुच्छिदा महाकूडा ।
वेत्तासणसंठाणा रयणमया होंति सव्वट्ठ।।४०।।
ताणं मूले उवरिं समंतदो दिव्ववेदीओ।
पुव्विल्लवेदियाणं सारिच्छं वण्णणं सव्वं।।४१।।
वेदीणब्भंतरए वणसंढा वरविचित्ततरूणियरा।
पुक्खरिणीहिं समग्गा तप्परदो दिव्ववेदीओ ।।४२।।

।। कूडा गदा ।।

रहित, ऐसे वे पृथिवी के परिणाम रूप सब भवनों के चैत्यवृक्ष नियम से जीवों की उत्पत्ति और विनाश के निमित्त होते हैं।।३६-३७।। चैत्यवृक्षों के मूल में चारों दिशाओं में से प्रत्येक दिशा में पद्मासन से स्थित और देवों से पूजनीय पांच पांच जिनप्रतिमाएँ विराजमान होती हैं।।३८।। ये जिनप्रतिमाएँ चार तोरणों से रमणीय, आठ महा मंगल द्रव्यों से सुशोभित और उत्तमोत्तम रत्नों से निर्मित मानस्तम्भों से अतिशय शोभायमान होती हैं।।३९।।

।।इस प्रकार वेदियों का वर्णन समाप्त हुआ।।

भवनवासी देव के भवन में जिनमंदिर

इन वेदियों के बहुमध्य भाग में सर्वत्र एक सौ योजन ऊंचे, वेत्रासन के आकार और रत्नमय महाकूट स्थित हैं ।। ४० ।।

इन कूटों के मूल भाग में और ऊपर चारों तरफ दिव्य वेदियां हैं । इन वेदियों का सम्पूर्ण वर्णन वेदियों जैसा ही समझना चाहिये ।। ४१ ।।

इन वेदियों के भीतर उत्तम एवं विविध प्रकार के वृक्ष समूह से व्याप्त और वापिकाओं से परिपूर्ण वनसमूह हैं, फिर इनके आगे दिव्य वेदियां हैं ।। ४२ ।।

।। इस प्रकार कूटों का वर्णन समाप्त हुआ।।

कूडोवरि पत्तेक्कं जिणवरभवणं हवेदि एक्केक्कं।
वररयणकंचणमयं विचित्तविण्णासरमणिज्जं।।४३।।
चउगोउरा तिसाला वीहिं पडि माणथंभणवथूहा।
वणधयचेत्तखिदीओ सव्वेसुं जिणणिकेदेसुं ।।४४।।
णंदादिओ तिमेहल तिपीढपुव्वाणि धम्मविभवाणि।
चउवणमज्झेसु ठिदा चेत्ततरू तेसु सोहंति।।४५।।
हरिकरिवसहखगाहिवसिहिससिरविहंसपउमचक्कधया।
एक्केक्कमट्ठजुदसयमेक्केक्कं अट्ठसय खुल्ला।।४६।।
वंदणभिसेयणच्चणसंगीआलोयमंडवेहिं जुदा ।
कीडणगुणणगिहेहिं विसालवरपट्टसालेहिं।।४७।।
सिरिदेवीसुददेवीसव्वाणसणक्कुमारजक्खाणं ।
रूवाणि अट्ठमंगल देवच्छंदम्मि जिणणिकेदेसुं।।४८।।
भिंगारकलसदप्पणधयचामरछत्तवियणसुपइट्ठा ।
इय अट्ठमंगलाणिं पत्तेक्कं अट्ठअहियसयं।।४९।।

प्रत्येक कूट के ऊपर एक-एक जिनेन्द्र भवन है, जो उत्तम रत्न एवं सुवर्ण से निर्मित तथा विचित्र विन्यास से रमणीय है ।। ४३ ।।

सब जिनालयों में चार चार गोपुरों से संयुक्त तीन कोट, प्रत्येक वीथी में एक मानस्तंभ व नौ स्तूप तथा (कोटों के अन्तराल में) क्रम से वनभूमि, ध्वजभूमि और चैत्यभूमिहोती हैं ।। ४४ ।।

उन जिनालयों में चारों वनों के मध्य में स्थित तीन मेखलाओं से युक्त नन्दादिक वापिकायें और तीन पीठों से संयुक्त धर्म विभव, तथा चैत्यवृक्ष शोभायमान होते हैं।।४५।।

ध्वजभूमि में सिंह, गज, वृषभ, गरूड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, पद्म और चक्र, इन चिह्नों से अंकित प्रत्येक चिह्न वाली एक सौ आठ महाध्वजाएँ, और एक एक महाध्वजा के आश्रित एक सौ आठ क्षुद्रध्वजायें होती हैं ।। ४६ ।। उपर्युक्त जिनालय वंदनमण्डप, अभिषेकमण्डप, नर्तनमण्डप, संगीतमण्डप और आलोक (प्रेक्षण) मंडप, इन मण्डपों तथा क्रीड़ागृह, गुणनगृह अर्थात् स्वाध्यायशाला एवं विशाल व उत्तम पट्टशालाओं से (चित्रशालाओं से) युक्त होते हैं ।। ४७ ।। जिनमन्दिरों में देवच्छंद के भीतर श्रीदेवी, श्रुतदेवी तथा सर्वाण्ह और सनत्कुमार यक्षों की मूर्तियां एवं आठ मंगल द्रव्य होते हैं ।। ४८ ।।

झारी, कलश, दर्पण, ध्वजा, चामर, छत्र, व्यजन और सुप्रतिष्ठ इन आठ मंगल द्रव्यों में से वहां प्रत्येक एक सौ आठ होते हैं ।। ४९ ।।

दिप्पंतरयणदीवा जिणभवणा पंचवण्णरयणमया।
गोसीसमलयचंदणकालागरूधूवगंधड्ढा ।।५०।।
भंभामुइंगमद्दलजयघंटावंकंसतालतिवलीणं।
दुंदुहिपडहादीणं सद्देहिं णिच्चहलबोला।।५१।।
सिंहासणादिसहिदा चामरकरणागजक्खमिहुणजुदा।
णाणाविहरयणमया जिणपडिमा तेसु भवणेसुं।।५२।।
बाहत्तरि लक्खाणिं कोडीओ सत्त जिणणिकेदाणिं।
आदिणिहणुज्झिदाणिं भवणसमाइं विराजंति।।५३।।
७७२००००० ।
सम्मत्तरयणजुत्ता णिब्भरभत्तीय णिच्चमच्चंति ।
कम्मक्खवणणिमित्तं देवा जिणणाहपडिमाओ।।५४।।
कुलदेवा इदि मण्णिय अण्णेहिं बोहिया बहुपयारं।
मिच्छाइट्ठी णिच्चं पूजंति जिणिंदपडिमाओ[1]।।५५।।

।।समाप्तम्।।

ये जिनभवन चमकते हुये रत्नदीपकों से सहित, पांच वर्ण के रत्नों से निर्मित, गोशीर्ष, मलयचंदन, कालागरू और धूप के गन्ध से व्याप्त, तथा भंभा, मृदंग, मर्दल, जयघंटा, कांस्यताल, तिवली, दुंदुभि एवं पटहादिक के शब्दों से नित्य ही शब्दायमान रहते हैं ।। ५०-५१ ।।

उन भवनों मे सिहांसनादिक से सहित, हाथ मे चँवर लिये हुये नागयक्षयुगल से युक्त और नाना प्रकार के रत्नों से निर्मित ऐसी जिनप्रतिमायें विराजमान हैं ।। ५२ ।। आदि-अन्त से रहित (अनादिनिधन) वे जिनभवन, भवनवासी देवों के भवनों की संख्या प्रमाण सात करोड़ बहत्तर लाख, सुशोभित होते हैं ।। ५३ ।। ७७२००००० ।

जो देव सम्यग्दर्शनरूपी रत्न से युक्त हैं, अर्थात् सम्यग्दृष्टि हैं, वे कर्मक्षय के निमित्त नित्य ही इन जिनप्रतिमाओं की भक्ति से पूजा करते हैं ।। ५४ ।।

इसके अतिरिक्त अन्य सम्यग्दृष्टि देवों से सम्बोधित किये गये मिथ्यादृष्टि देव भी कुलदेवता मानकर उन जिनेन्द्रमूर्तियों की नित्य ही बहुत प्रकार से पूजा करते हैं।।५५।।

।।जिनभवनों का वर्णन समाप्त हुआ।।

---

1. तिलोयपण्णत्ती पृ. 114 से 117 तक।

मन्दरपर्वत के जिनमंदिर

(जंबूद्वीपपण्णत्ती से)

णमिऊण सुपासजिणं सुरिंदवइसंथुवं विगयमोहं ।
मंदरजिणवरभवणं जहाकमं तं परूवेमि ।।१।।
संखिंदुकुंदधवलो मणिगणकरजालखदियतिमिरोहो।
जिणइंदपवरभवणो तिहुयणतिलओ त्ति णामेण।।२।।
पण्णत्तरिउच्छेहो पण्णासायाम तह य विक्खंभो ।
पुण्णिंदुमंडलणिभो गंधकुडी दिव्वपासादे।।३।।
सोलसजोयणतुंगा अट्ठेव य वित्थढा समुद्दिट्ठा ।
वित्थारसमपवेसा तस्स दु दाराण परिसंखा ।।४।।
मंदरगिरिपढमवणे चत्तारि हवंति चदुसु वि दिसासु।
जिणइंदांणं भवणा अणाइणिहणा समुद्दिट्ठा ।।५।।
जोयणसयआयामा तदद्धवित्थार उभयदलतुंगा ।
उग्गाढ अद्धजोयण रयदमयाभित्तिजिणगेहा ।।६।।

सुरेन्द्रपतियों से संस्तुत और मोह से रहित सुपार्श्व जिनेन्द्र को नमस्कार करके क्रमानुसार उस मन्दर पर्वतस्थ जिनभवन का निरूपण करते हैं।।१।।

त्रिभुवनतिलक नामक वह जिनेन्द्रभवन शंख, चन्द्र और कुंद पुष्प के समान धवल तथा मणिगणों के किरणसमूह से अन्धकार समूह को नष्ट करने वाला है।।२।।

उस दिव्य प्रासाद में पचहत्तर (योजन) ऊंची एवं पचास (योजन) आयाम व विष्कम्भ से सहित पूर्ण चन्द्रमण्डल के समान गन्धकुटी है।।३।।

इसके द्वार सोलह योजन ऊंचे, आठ योजन विस्तृत और विस्तार के समान प्रवेश से सहित हैं, यह उसके द्वारों का प्रमाण है।।४।।

मन्दर पर्वत के प्रथम वन में चारों ही दिशाओं में अनादिनिधन चार जिनेन्द्र भवन कहे गये हैं।।५।।

रजतमय भित्तियों से संयुक्त ये जिनगृह सौ योजन आयत, उससे आधे अर्थात् पचास योजन विस्तृत, आयाम व विस्तार के सम्मिलित प्रमाण से आधे (१०० + ५०) ÷ २ = ७५ यो.) ऊंचे, तथा अर्ध योजन प्रमाण अवगाह से सहित हैं।।६।।

जिणभवणस्सवगाढं दिवड्ढसयसंखुणेण जं लद्धं।
तं उच्छेहं दिट्ठं पढभवणे जिणघराणं तु ।।७।।
गुणगारेण विभत्तं उच्छेहं जिणघराण जं लद्धं ।
तं अवगाहं णेयं समासदो होइ णिद्दिट्ठं ।।८।।
अहवा आयामे पुण विक्खंभं पक्खिबित्तु अद्धकदे।
जो लद्धो सो णेमो उच्छेहो सव्वभवणाणं।।९।।
उच्छेहं विगुणित्ता पंचासेणूण होइ आयामं ।
आयामद्धेण पुणो विक्खंभो होइ भवणाणं ।।१०।।
विक्खंभे पक्खित्ते आयामे जादरासिणा तेण ।
उच्छेहे भागहिदे जं लद्धं होइ अवगाहं ।।११।।
तेसिं जिणभवणाणं पुव्वुत्तरदक्खिणेसु दाराणि ।
तिण्णेव समुद्दिट्ठा कंचणमणिरयणणिवहाणि।।१२।।
दाराणि मुणेयव्वा अट्ठेव य जोयणाणि तुंगाणि ।
वित्थाराणि तदद्धं मुत्तामणिदामणिवहाणि ।।१३।।

जिनभवन के अवगाह को डेढ़ सौ से गुणा करने पर जो प्राप्त हो उतना (२ × १५०)÷ २ = ७५) प्रथम वन में स्थित जिनगृहों का उत्सेध कहा गया है।।७।।

उक्त गुणकार का उत्सेध में भाग देने पर जो लब्ध हो उतना जिनगृहों का अवगाह जानना चाहिये, ऐसा संक्षेप से निर्दिष्ट किया गया है।।८।।

अथवा, आयाम में विष्कम्भ को मिलाकर आधा करने पर जो प्राप्त हो वह सब भवनों का उत्सेध जानना चाहिये (देखिये ऊपर गा. ६)।।९।।

उत्सेध को दूना करके पचास कम कर देने से भवनों का आयाम और आयाम से आधा विष्कम्भ होता है।।१०।।

आयाम में विष्कम्भ के मिलाने पर उत्पन्न हुई उस राशि से उत्सेध के भाजित करने पर जो लब्ध हो उतना अवगाह का प्रमाण होता है।।११।।

उन जिनभवनों के पूर्व, उत्तर और दक्षिण में सुवर्ण, मणि एवं रत्नों के समूह से संयुक्त तीन ही द्वार कहे गये हैं।।१२।।

मुक्ता एवं मणियों की मालाओं के समूह से संयुक्त ये द्वार आठ योजन ऊंचे और इससे आधे विस्तार वाले हैं ।।१३।।

भवणेसु अवरपुव्वे मणिमालाविप्फुरंतकिरणाओ।
अट्ठेव सहस्साओ लंवंतीओ विचित्तवण्णाओ।।१४।।
चउवीससहस्साओ णिम्मलवरकणयदिव्वमालाओ ।
ताणंतरे णेया लंबंतीओ विरायंति ।।१५।।
कप्पूरागरूचंदणतुरूक्खवरसुरभिधूमगंधड्ढा ।
धूवघडा णायव्वा चउवीससहस्स परिसंखा ।।१६।।
तरूणरवितेयणिवहा सुगंधदामाण अभिमुहा दिव्वा।
बत्तीस रयणकलसा सहस्सगुणिदा समुद्दिट्ठा।।१७।।
चत्तारि सहस्साणि दु बाहिरभागम्मि होंति मणिमाला।
बारस चेव सहस्सा कंचणमाला समुद्दिट्ठा।।१८।।
धूवघडा विण्णेया बाहिरभागम्मि बारससहस्सा ।
सोलस चेव सहस्सा कंचणकलसा समुद्दिट्ठा।।१९।।
समहियसोलसजोयणआयामा वित्थडा हु अट्ठहिया।
बेजोयणउव्विद्धा पीढाण हवंति परिसंखा।।२०।।
वज्जिदणीलमरगयकक्केयणपउमरायणिवहाणि ।
वरवेदिपरिउडाणि य भवणाणं होंति पीढाणि।।२१।।

भवनों में (द्वार के) पश्चिम-पूर्व में प्रकाशमान किरणों से सहित और विचित्र वर्णवाली आठ हजार मणि मालायें लटकती रहती हैं ।।१४।।

उनके अन्तराल में निर्मल उत्तम सुवर्ण की चौबीस हजार दिव्य मालायें लटकती हुई विराजमान होती हैं।।१५।।

कर्पूर, अगरु, चन्दन और तुरूष्क के सुगन्धित उत्तम धूम के गन्ध से व्याप्त चौबीस हजार संख्या प्रमाण धूपघट जानना चाहिये।।१६।।

सुगन्धित मालाओं के अभिमुख तरूण सूर्य के समान तेज पुंज से संयुक्त दिव्य बत्तीस हजार रत्नमय कलश कहे गये हैं।।१७।।

बाह्य भाग में चार हजार मणिमालायें और बारह हजार सुवर्ण मालायें कही गई हैं।।१८।।

बाह्य भाग मे बारह धूपघट और सोलह हजार सुवर्ण कलश कहे गये हैं।।१९।।

सोलह योजन से अधिक आयत, आठ योजन विस्तीर्ण और दो योजन ऊंची, यह पीठों के आयामादिका प्रमाण है।।२०।।

भवनों के ये पीठ वज्र, इन्द्रनील, मरकत, कर्केतन और पद्मराग मणियों के समूह से निर्मित तथा उत्तम वेदी से वेष्टित होते हैं।।२१।।

सोलसजोयणदीहा वित्थिण्ण तदद्ध छच्च उत्तुंगा ।
बेगाउयअवगाढा मणिमयसोवाणपंतीओ।।२२।।
अट्ठुत्तरसयसंखा सोवाणा होंति तेसु भवणेसु ।
पंचधणुस्सयतुंगा साहियपणवण्णऊण इक्केक्का।।२३।।
वेगाउयउव्विद्धा पंचधणुस्सयपमाणवित्थिण्णा ।
पीढाणं वेदीओ णिद्दिट्ठा होंति णायव्वा।।२४।।
फलिहमणिभित्तिणिवहा णाणामणिरयणजालपरियरिया।
वेरूलियखंभपउरा सोवाणतिगेहिं संजुत्ता।।२५।।
दिव्वामोदसुगंधा देवच्छंदेत्ति णामदो णेया ।
वरगब्भघरा दिट्ठा पइण्णकुसुमच्चणसणाहा।।२६।।
जिणइंदाणं पडिमा अणाइणिहणा सहावणिप्पण्णा।
पंचधणुस्सयतुंगा वरवंजणलक्खणोवेदा।।२७।।
अट्ठोत्तरसयसंखा णाणामणिकणयरयणपरिणामा ।
पीढेसु होंति णेया सयमेव जिणिंदपडिमाओ।।२८।।
धवलादवत्त चामरहरिपीढमहंततेयसंजुत्ता ।
दुंदुहिअसोयतरूवरसुरकुसुमपडंतसंछण्णा ।।२९।।

सोलह योजन दीर्घ, इससे आधी विस्तीर्ण, छह योजन ऊँची, और दो गव्यूति प्रमाण अवगाह से सहित मणिमय सोपान पंक्तियां होती हैं।।२२।।

उन भवनों में एक सौ आठ सोपान होते हैं। इनमें से एक एक सोपान साधिक पचपन कम पांच सौ धनुष अर्थात् चार सौ चवालीस धनुष से कुछ अधिक ऊंचा होता है।।२३।।

पीठों की वेदियाँ दो गव्यूति ऊँची और पाँच सौ धनुष प्रमाण विस्तीर्ण होती हैं, ऐसा निर्दिष्ट किया गया जानना चाहिये।।२४।।

स्फटिक मणिमय भित्तिसमूह से सहित, नाना मणि एवं रत्नों के समूह से व्याप्त, वैडूर्य मणिमय खम्भों से प्रचुर, तीन सोपानों से संयुक्त, दिव्य आमोद से सुगन्धित, और बिखरे हुए पूजाकुसुमों से सनाथ देवच्छन्द नामक श्रेष्ठ गर्भगृह कहे गये हैं।।२५-२६।।

उन पीठों पर अनादि-निधन, स्वभाव से निष्पन्न, पांच सौ धनुष ऊंची, उत्तम व्यञ्जन एवं लक्षणों से संयुक्त ऐसी नाना मणियों, सुवर्ण एवं रत्नों के परिणाम रूप स्वयमेव एक सौ आठ जिनेन्द्रप्रतिमायें होती हैं।।२७-२८।।

उक्त प्रतिमायें धवल छत्र, चामर, हरिपीठ (सिंहासन) और महान् तेज (भामण्डल) से संयुक्त तथा दुंदुभि, उत्तम अशोकवृक्ष और सुरों द्वारा की गई कुसुमवृष्टि से व्याप्त होती हैं।।२९।।

णाणाविहउवयरणा अट्ठोत्तरसयपमाण णिद्दिट्ठा ।
पत्तेयं पत्तेयं एगेगाणं वियाणाहि।।३०।।
रयणमए जगदीए रयदमयापीढतुंगसिहरेसु ।
मणिमयखंभेसु तहा धयणिवहा होंति णिद्दिट्ठा।।३१।।
सीहगयहंसगोवइसयवत्तमऊरमयरधयणिवहा ।
चक्कायवत्तगरूडा दसविहसंखा मुणेयव्वा।।३२।।
अट्ठसयं अट्ठसयं एगेगधयाण होंति परिवारा ।
वरपंचवण्णदिव्वा मुत्तामणिदामकयसोहा।।३३।।
मुहमंडवाण तिण्हं रयदसुवण्णाण बाहिरदिसाए ।
गोउरसमधियतुंगा समंतदो संठियपडाया।।३४।।
कंचणमणिस्यणमया पायारा तत्थ जोयणुव्विद्धा ।
सोलसयजोयणाइं तोरणदाराणि रम्माणि।।३५।।
जोयणसयआयामा विक्खंभ तदद्ध सोलसुत्तुंगा ।
मुहमंडवा वि णेया बेकोसवगाह णिद्दिट्ठा।।३६।।
पेक्खागिहा य पुरदो विक्खंभायाम जोयणसयाणि।
समहियसोलसतुंगा जोयणअद्धा दु अवगाहा।।३७।।

एक एक (प्रतिमा के) समीप नाना प्रकार के उपकरणों (मंगलद्रव्यों) में से प्रत्येक प्रत्येक एक सौ आठ संख्या प्रमाण निर्दिष्ट किये गये हैं।।३०।।

रत्नमय पृथिवी पर स्थित रजतमय पीठ के ऊपर ऊंचे शिखरों वाले मणिमय खम्भों के ऊपर ध्वजासमूह निर्दिष्ट किये गये हैं।।३१।।

सिंह, गज, हंस, गोपति (वृषभ), कमल, मयूर, मकर, चक्र, आतपत्र और गरूड़, इन दश प्रकार की ध्वजाओं के समूह जानना चाहिये।।३२।।

इनमें से एक एक ध्वजा के मोतियों व मणियों की मालाओं से शोभायमान उत्तम पांच वर्ण वाली एक सौ आठ एक सौ आठ दिव्य परिवार ध्वजायें होती हैं।।३३।।

वहां रजत व सुवर्णमय मुखमण्डपों के बाह्य भाग में गोपुरों से कुछ अधिक ऊंचे व चारों ओर स्थित पताकाओं से सहित सुवर्ण, मणि एवं रत्नमय तीन प्राकार व उनमें एक योजन ऊंचे सोलह योजन के रमणीय तोरणद्वार होते हैं।।३४-३५।।

मुखमण्डप भी सौ योजन आयत, इससे आधे विस्तृत, सोलह योजन ऊँचे और दो कोश अवगाह से युक्त कहे गए हैं।।३६।।

उनके आगे सौ योजन विष्कम्भ व आयाम से सहित, सोलह योजन से कुछ अधिक ऊंचे, और अर्ध योजन अवगाह से संयुक्त प्रेक्षागृह होते हैं।।३७।।

सोलसजोयणतुंगा चउसट्ठायामवित्थडा णेया।
ताणं पुरदो दिट्ठा सभाघरा रयणसंछण्णा।।३८।।
ताणं सभाघराणं पीढाणि हवंति कंचणमयाणि ।
विक्खंभायामेण य असीदि तह जोयणाणि हवे।।३९।।
बेजोयणउच्चाणि य पउमप्पहवेदिएहि जुत्ताणि ।
रयणमयतोरणेहि य रम्माणि हवंति पीढाणि।।४०।।
ताणं सभाघराणं पुरदो थूहाणि होंति रम्माणि ।
जिणवरपडिमच्छण्णा णाणामणिरयणपरिणामा।।४१।।
रयणमयविउलपीढं उत्तुंगं जोयणाणि चालीसं ।
थूहस्स दु चउवीसाकंचणवेदीसमाजुत्तं।।४२।।
पीढस्सुवरि विचित्तं तिमेहलापरिउडं महाथूहं ।
आयामं विक्खंभं उच्छेहं होइ चउसट्ठी।।४३।।
थूहादो पुव्वदिसं गंतूणं होइ कणयमयपीढं ।
विक्खंभायामेण य सहस्स तह जोयणा णेया।।४४।।

उनके आगे सोलह योजन ऊंचे और चौंसठ योजन प्रमाण आयाम व विस्तार से सहित रत्नों से व्याप्त सभागृह होते हैं ।।३८।।

उन सभागृहों के सुवर्णमय पीठ अस्सी योजन प्रमाण विष्कम्भ व आयाम से सहित होते हैं ।।३९।।

उक्त पीठ दो योजन ऊंचे, पद्म जैसी प्रभावाली वेदिकाओं से युक्त और रत्नमय तोरणों से रम्य होते हैं ।। ४० ।।

उन सभागृहों के आगे जिनेन्द्रप्रतिमाओं से युक्त नाना मणि एवं रत्नों के परिणाम रूप रमणीय स्तूप होते हैं।।४१।।

स्तूप का रत्नमय विशाल पीठ चौबीस सुवर्णमय वेदियों से संयुक्त तथा चालीस योजन ऊंचा होता है।।४२।।

पीठ के ऊपर तीन मेखलाओं से वेष्टित महा स्तूप होता है। इसका आयाम, विष्कम्भ और उत्सेध चौंसठ योजन प्रमाण होता है।।४३।।

स्तूप से आगे पूर्व दिशा में जाकर एक हजार योजन प्रमाण विष्कम्भ व आयाम से सहित सुवर्णमय पीठ जानना चाहिये।।४४।।

बारसवेदिसमग्गं वरतोरणमंडियं परमरम्भं ।
मणिगणजलंतणिवहं बहुतरूगणसंकुलं दिव्वं।।४५।।
तस्स दु पीढस्सुवरिं सोलस तह जोयणा समुत्तुंगा ।
चेदियरूक्खा णेया णाणामणिरयणपरिणामा।।४६।।
एगं च सयसहस्सं चालीसा तह सहस्स परिसंखा ।
एगसयं वीसहिया सिद्धत्थतरूण परिसंखा।।४७।।
उड्ढं गंतूण पुणो धरणीदो जोयणाणि चत्तारि ।
चदुसु वि दिसाविभागे साहाओ होंति णिद्दिट्ठा।।४८।।
बारहजोयण दीहा सिद्धत्थयणामधेयरूक्खाणं ।
विक्खंभेणय जोयण णिद्दिट्ठा सव्वदरिसीहिं।।४९।।
अट्ठेव जोयणेसु य रूंदेसु महादुमेसु णिद्दिट्ठा ।
जिणइंदाणं पडिमा अकिट्टिमा सासयसभावा।।५०।।
पलियंकासणबद्धा रयणमया पाडिहेरसंजुत्ता ।
सव्वाणं रूक्खाणं चदुसु वि भागेसु ते होंति।।५१।।

यह दिव्य पीठ बारह वेदियों से परिपूर्ण, उत्तम तोरणों से मण्डित, अतिशय रमणीय, देदीप्यमान मणिगणों के समूहों से युक्त और बहुत से तरूगणों से व्याप्त होता है।।४५।।

उस पीठ के ऊपर स्थित सोलह योजन ऊंचे नाना मणियों एवं रत्नों के परिणाम रूप चैत्यवृक्ष जानना चाहिये।।४६।।

सिद्धार्थ वृक्षों की संख्या एक लाख चालीस हजार एक सौ बीस है।।४७।।

पृथिवी से चार योजन ऊपर जाकर चारों ही दिशा विभागों में उनकी शाखायें निर्दिष्ट की गई हैं।।४८।।

सर्वदर्शियों द्वारा सिद्धार्थ नामक वृक्षों की शाखाएँ बारह योजन दीर्घ और एक योजन विष्टकम्भ से युक्त निर्दिष्ट की गई हैं।।४९।।

आठ योजन रूंद वाले उन महाद्रुमों पर अकृत्रिम और शाश्वतिक स्वभाव वाली जिनेन्द्रों की प्रतिमायें निर्दिष्ट की गई हैं।।५०।।

पल्यंकासन से विराजमान और प्रातिहार्यों से संयुक्त वे रत्नमय जिनप्रतिमायें सब वृक्षों के चारों ही भागों में होती हैं।।५१।।

तत्तो दुमसंडादो गंतूण पुणो वि पुव्वदिसभागे ।
धयणिवहाणं पीढं बारसवेदीहिं संजुत्तं।।५२।।
तम्मि वरपीढसिहरे सोलस तह योजणा समुत्तुंगा ।
कोसेग होंति रूंदा वेरुलियमया महाखंभा।।५३।।
खंभेसु होंति दिव्वा महाधया विविहवण्णसंजुत्ता ।
छत्तत्तयवरसिहरा अणोवमा रूवसंपण्णा।।५४।।
धयणिवहाणं पुरदो वावीओ होंति सलिलपुण्णाओ।
सययोजणदीहाओ पण्णासाओ य रूंदाओ।।५५।।
दसजोयणउंडाओ कंचणमणिवेदिएहि जुत्ताओ ।
मणितोरणणिवहाओ कमलुप्पलकुसुमछण्णाओ ।।५६।।
एवं पुव्वदिसाए जिणभवणं मंदरस्स णिद्दिट्ठं ।
अवसेसाण दिसाणं एमेव कमो मुणेयव्वो।।५७।।
तत्तो दहादु परदो पुव्वुत्तरदक्खिणेसु भागेसु ।
पासादा णायव्वा देवाणं कीडणा होंति।।५८।।
कणयमया पासादा पण्णासा जोयणा समुत्तुंगा ।
विक्खंभायामेण य पणवीसा होंति णिद्दिट्ठा।।५९।।

उस वृक्ष समूह से पुनः पूर्व दिशा भाग में जाकर बारह वेदियों से संयुक्त ध्वजासमूहों का पीठ होता है।।५२।।

उस उत्तम पीठ के शिखर पर सोलह योजन ऊंचे और एक कोश विस्तार वाले वैडूर्यमणिमय विशाल खम्भ होते हैं।।५३।।

खम्भों पर विविध वर्णों से संयुक्त, शिखर पर उत्तम तीन छत्रों से सुशोभित और अनुपम रूप से सम्पन्न दिव्य महाध्वजायें होती हैं।।५४।।

ध्वजा समूहों के आगे सौ योजन दीर्घ, पचास योजन विस्तृत, दश योजन गहरी, सुवर्ण एवं मणिमय वेदिकाओं से युक्त, मणिमय तोरण समूह से संयुक्त, कमल व उत्पल कुसुमों से व्याप्त और जल से परिपूर्ण वापियां होती हैं ।। ५५-५६ ।।

इस प्रकार मन्दर पर्वत की पूर्व दिशा में स्थित जिनभवन का स्वरूप निर्दिष्ट किया है । शेष दिशाओं के जिनभवनों का भी यही क्रम जानना चाहिये।।५७।।

उस द्रह के आगे पूर्व, उत्तर और दक्षिण भागों में देवों के क्रीडा प्रासाद हैं।।५८।।

ये सुवर्णमय प्रासाद पचास योजन ऊंचे और पच्चीस योजन प्रमाण विष्कम्भ व आयाम से सहित निर्दिष्ट किये गये हैं।।५९।।

कणयमया पासादा वेरुलियमया य मरगयमया य।
ससिकंतसूरकंताकक्केयणपुस्सरागमया ।।६०।।
वरवेदिएहिं जुत्ता कंचणमणिरयणजालपरियरियं ।
अक्खइअणाइणिहणा को सक्कइ वण्णिउं सयलं।।६१।।
तेहिंतो गंतूणं पुव्वदिसाए पुणो वि णायव्वो ।
वरतोरणं विचित्तं मणिकंचणरयणसंछण्णं।।६२।।
जोयणसयद्धतुंगं तदद्धवित्थार भासुरं दिव्वं ।
मुत्तादामेणद्धं वर घंटाजालरमणीयं।।६३।।
ततेक परं विचित्ता पासादा गोउराण पासेसु ।
जोयणसयउव्विद्धा दो दो दु हवंति णायव्वा।।६४।।
तत्तो परं विचित्ता घयणिवहा विविहवण्णजादीया ।
असिदी सहस्स संखा णिद्दिट्ठा होंति णायव्वा।।६५।।
तोरणसयसंजुत्ता वरवेदीपरिउडा समुत्तुंगा ।
सायरतरंगभंगा सोहंति महाधया रम्मा।।६६।।

उक्त प्रासाद सुवर्ण, वैडूर्यमणि, मरकतमणि, चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, कर्केतन एवं पुखराज मणियों से निर्मित, उत्तम वेदिकाओं से युक्त, सुवर्ण, मणि एवं रत्नों के समूह से व्याप्त, अक्षयी व अनादि-निधन हैं। उनका सम्पूर्ण वर्णन करने के लिये कौन समर्थ है?।।६०-६१।।

उनसे आगे फिर भी पूर्व दिशा मे जाकर मणि, सुवर्ण एवं रत्नों से व्याप्त विचित्र उत्तम तोरण जानना चाहिये ।। ६२ ।।

यह तोरण पचास योजन ऊंचा, इससे आधे (२५ यो.) विस्तार से सहित, भासुर, दिव्य, मुक्तामाला से संयुक्त और उत्तम घंटा समूह से रमणीय है।।६३।।

इसके आगे गोपुरों के पार्श्व भागों में सौ योजन ऊंचे दो दो विचित्र प्रासाद जानना चाहिये।।६४।।

इसके आगे विविध वर्ण व जाति के एक हजार अस्सी (१८० × १०) संख्या प्रमाण विचित्र ध्वजाओं के समूह निर्दिष्ट किये गये हैं।।६५।।

सौ तोरणों से संयुक्त व उत्तम वेदी से वेष्टित वे ऊंची रमणीय महाध्वजायें समुद्र की तरंगों के भंग के समान शोभायमान होती हैं।।६६।।

तत्तो परं वियाणह वणसंडं विविहपायवाइण्णं ।
वणवेदिएहि जुत्तं णाणामणिरयणपरिणामं।।६७।।
रयणमयपीढसोहं मणितोरणमंडियं मणभिरामं ।
कणयमयकुसुमसोहं मरगयवरपत्तसंछण्णं।।६८।।
चंपयअसोयगहणं सत्तच्छयअंबकप्पतरूणिवहं ।
वेरुलिफलसमिद्धं विद्दुमसाहाउलसिरीयं।।६९।।
ताणं कप्पदुमाणं मूलेसु हवंति चदुसु वि दिसासु ।
जिणइंदाणं पडिमा सपाडिहेरा विरायंति।।७०।।
सीहासणछत्तत्तयभामंडलचामरादिसंजुत्ता ।
पलियंकासणसंगद अणोवमा रूवसंठाणा।।७१।।
एवं तु भद्दसाले जंबूद्वीवस्स मंदरगिरिस्स ।
जिणभवणाण पमाणं समासदो होदि णायव्वा।।७२।।
वेरुलियफलिहमरगयगल्लिंदमसाररयणचित्ताणि ।
अंजणपवालमरगयजंबूणयभूसियतलाइं ।।७३।।
ससिकंतसूरकंता ताइं वरवइरलोहियंकाइ ।
वरमणिविउलसुणिम्मल सोहंति अणोवमगुणाइं।।७४।।

इसके आगे विविध पादपों से व्याप्त, वनवेदिकाओं से युक्त, नाना मणियों व रत्नों के परिणाम रूप, रत्नमय पीठ से सुशोभित, मणिमय तोरणों से मण्डित, मनोहर, सुवर्णमय कुसुमों से सुशोभित, मरकत मणिमय उत्तम पत्तों से व्याप्त, चंपक व अशोक वृक्षों से गहन, सप्तच्छद व आम्र कल्पवृक्षों के समूह से परिपूर्ण, वैडूर्यमय फलों से समृद्ध, और मूंगामय शाखाओं की शोभा से संयुक्त वनखण्ड जानना चाहिये।।६७-६९।।

उन कल्पवृक्षों के मूल भागों में चारों ही दिशाओं में प्रतिहार्य सहित जिनेन्द्रों की प्रतिमायें विराजमान हैं।।७०।। ये प्रतिमायें सिंहासन, तीन छत्र, भामण्डल और चामरादि से संयुक्त, पल्यंकासन से स्थित और अनुपम रूप व संस्थान से युक्त है।।७१।।

इस प्रकार संक्षेप से जम्बूद्वीप सम्बन्धी मंदर पर्वत के भद्रशाल वन में स्थित जिनभवनों का प्रमाण जानना चाहिये ।। ७२ ।।

ये जिनभवन वैडूर्य, स्फटिक, मरकत, मसारगल्ल और इन्द्र (इन्द्रनील) रत्नों से विचित्र, अंजन, प्रवाल, मरकत और सुवर्ण से भूषित तलवाले, चन्द्रकान्त, सूर्यकान्त, उत्तम वज्र एवं लोहितांक से सहित, उत्तम व विपुल मणियों से अतिशय निर्मल तथा अनुपम गुणों से युक्त होते हुए शोभायमान हैं।।७३-७४।।

सुविणिम्मलवरविउला चोक्खा य पसाहिया दरिसणिज्जा।
अच्चंतमणहरा ते णाणाविहरूवसंपण्णा।।७५।।
वरकमलकुमुदकुवलयणीलुप्पलबउलतिलयकयसोहा।
कप्पूरागरूचंदणकालागरुधूमगंधड्ढा ।।७६।।
धयविजयवइजयंतीपडायबहुकुसुमसोहकयमाला ।
विलसंतमणभिरामा बहुकोदुगमंगलसणाहा।।७७।।
जगजगजगंतसोहा अच्छेरयरूवसारसंठाणा ।
ते विविहरइयमंगलवंदणमालुज्जलसिरीया।।७८।।
णिच्चं मणोभिरामा फुरंतमणिकिरणसोहसंभारा ।
कंचणरयणमहामणिभिसंतपासादसंधायं ।।७९।।
अगरूयतुरूक्कचंदणणाणाविहगंधरिद्धिसंपण्णा ।
दूरालोयमणोहर दीसंति महंतपासादा।।८०।।
घंटाकिंकिणिबुब्बुदचामरणिवहेहिं सोहिया रम्भा ।
मेरूस्स य जिनभवणा समासदो होंति णिद्दिट्ठा।।८१।।
बलिपुप्फगंधअक्खयपदीववरधूवसुरहितोएहिं ।
अच्चंति य वंदंति य सुरपवरा सददकालम्मि।।८२।।

अतिशय निर्मल, विस्तृत, शुद्ध, प्रसाधित (सजे हुए), दर्शनीय, अत्यन्त मनोहर, नाना प्रकार के आकार अथवा मूर्तियों से सम्पन्न उत्तम कमल, कुमुद, कुवलय , नीलोत्पल, वकुल और तिलक वृक्षों से शोभायमान, कर्पूर, अगरू, चन्दन और कालागरू के धुएं के गन्ध से व्याप्त, विजया व वैजयन्ती ध्वजा-पताकाओं से सहित, बहुत से कुसुमों की मालाओं से शोभायमान, विलास युक्त, मन को अभिराम, बहुत से कौतुक एवं मंगल से सनाथ, जगमगाती हुई कान्ति से सहित, आश्चर्यजनक रूप व श्रेष्ठ आकृति से युक्त, विविध प्रकार की रची गई मंगल स्वरूप, वन्दनमालाओं से उज्ज्वल शोभावाले, नित्य मनोहर, प्रकाशमान मणिकिरण समूह से संयुक्त सुवर्ण, रत्न एवं महामणियों से प्रकाशमान प्रासाद समूह से युक्त तथा अगरू, तुरुष्क व चन्दन की नाना प्रकार की गन्धऋद्धि से सम्पन्न, ऐसे वे महाप्रासाद दूर से देखने में मनोहर दिखते हैं।।७५-८०।।

घंटा, किंकिणी, बुद्बुद और चामरसमूहों से शोभायमान उन रमणीय मेरु के जिनभवनों का संक्षेप से स्वरूप निर्दिष्ट किया गया है।।८१।।

श्रेष्ठदेव सर्वदा बलि (नैवेद्य) पुष्प, गन्ध, अक्षत, प्रदीप, उत्तम धूप व सुगन्धित जल से पूजा करते हैं और वन्दना करते हैं।।८२।।

सव्वंगसुंदरीओ सव्वालंकारभूसिदंगीओ ।
कलमहुरसुस्सराओ इंदियपल्हायणकरीओ।।८३।।
सुकुमारकोमलाओ जोव्वणगुणसालिणीओ सव्वाओ।
पीदिं जणंति ताओ अप्पडिरूवेहि रूवेहिं।।८४।।
जिणइंदाणं चरियं गणहरदेवाण हलधराणं च ।
जिणभवणेसु वि णिच्चं अच्छरसाओ पणच्चंति।।८५।।
वरपडहभेरिमद्दलमुदिंग कंसालकाहलादीहिं ।
वायंति सुरा तूरं झल्लरिबहुसंखसद्देहिं।।८६।।
महुरेहिं मणहरेहि य दुंदुहिघोसोहि दिव्ववयणेहि ।
गायंति किण्णरगणा संभूदगुणं जिणिंदाणं।।८७।।
गंधव्वगीयवाइयणाडयसंगीयसद्दगंभीरं ।
वरभद्दसालभवणं समासदो होइ णिद्दिट्ठं।।८८।।
जंबूदीवस्स जहा मेरुस्स जिणिंदइंदवरभवणा ।
अवसेसमंदराणं जिणिंदभवणा तहा चेव।।८९।।
कुलपव्वदेसु एवं वक्खारापव्वदेसु एमेव ।
णंदणवणेसु एवं जिणभवणा होंति णायव्वा।।९०।।

इन जिनभवनों में समस्त अंगों से सुन्दर, सब अलंकारों से भूषित शरीर वालीं, कल एवं मनोहर सुन्दर स्वर से संयुक्त, इन्द्रियों को आल्हादित करने वाली, सुकुमार, कोमल, यौवनगुणों से शोभायमान तथा अप्रतिम (अनुपम) रूपों से प्रीति को उत्पन्न करने वाली वे अप्सरायें नित्य जिनेन्द्र, गणधर देव और बलदेवों के चरित्र का अभिनय करती हैं।।८३-८५।।

देवगण झालर एवं बहुतसे शंखों के शब्दों के साथ उत्तम पटह, भेरी, मर्दल, मृदंग, कांस्याल और काहलादिक बाजों को बजाते हैं।।८६।।

किन्नरगण मधुर एवं मनोहर दुंदुभिघोषों के साथ दिव्य वचनों द्वारा जिनेन्द्रों के प्रचुर गुणों को गाते हैं।।८७।।

गन्धर्वों के गीत, वादित्र, नाटक एवं संगीत के शब्द से गम्भीर उस उत्तम भद्रशाल वन के जिनभवन का स्वरूप संक्षेप से निर्दिष्ट किया गया है।।८८।।

जिस प्रकार जम्बूद्वीप सम्बन्धी मेरू के उत्तम जिनेन्द्र भवनों का स्वरूप कहा है उसी प्रकार शेष मेरू पर्वतों के जिनेन्द्र भवनों का स्वरूप समझना चाहिये।।८९।।

इसी प्रकार कुलपर्वतों पर, इसी प्रकार ही वक्षार पर्वतों पर और इसी प्रकार नन्दन वनों में भी जिनभवन होते हैं, ऐसा जानना चाहिये।।९०।।

णवरि विसेसो णेओ वक्खारणगादिएसु भवणाणं ।
विक्खंभा आयामा उच्छेहा होंति अण्णण्णा।।९१।।
देवा चउण्णिकाया आगंतूणं महाविभूदीए ।
पूजं करेंति महदा णंदीसरअट्ठदिवसेसु।।९२।।
गयवरखंधारूढो बहुविहमणिविप्फुरंतमणिमउडो ।
उज्जलवरवज्जकरो सोहम्मिंदो समोइण्णो।।९३।।
वरवसभसमारूढो कंठाकडिसुत्तभूसियसरीरो ।
णिम्मलतिसूलपाणी ईसाणिंदो समोइण्णो।।९४।।
वरसीहसमारूढो उदयक्कसमाण कुंडलाहरणो ।
वरअसिपहरणहत्थो सणक्कुमारो समोइण्णो।।९५।।
वरसीहसमारूढो णाणामणिरयणभूसियसरीरो ।
परसुवरमंडियकरो माहिंदसुरो समोइण्णो।।९६।।
ससिधवलहंसचढिओ णिम्मलमणिदंडपद्दरणकरत्थो।
धवलादवत्तचिण्हो बंभसुरिंदो समोइण्णो।।९७।।

परन्तु विशेष इतना जानना चाहिये कि वक्षार पर्वतादिकों के ऊपर स्थित जिनभवनों का विष्कम्भ, आयाम और उत्सेध भिन्न भिन्न होता है।।९१।।

चार निकाय के देव महा विभूति के साथ यहाँ आकर नन्दीश्वर (अष्टाह्निक पर्व) के आठ दिनों में महती पूजन करते हैं।।९२।।

बहुत प्रकार की मणियों द्वारा प्रकाशमान मणिमुकुट से संयुक्त व हाथ में उज्ज्वल एवं श्रेष्ठ वज्र को लिए हुए सौधर्म इन्द्र उत्तम गजराज के कन्धे पर चढ़कर आता है।।९३।।

कण्ठा व कटिसूत्र से भूषित शरीर वाला ईशान इन्द्र उत्तम वृषभ पर चढ़कर हाथ में निर्मल त्रिशूल को लिए हुए यहां आता है।।९४।।

उदयकालीन सूर्य के समान कुण्डल रूप आभरणों से भूषित सनत्कुमार इन्द्र हाथ में तलवार आयुध को लिए हुए श्रेष्ठ सिंह पर चढकर यहां आता है।।९५।।

नाना मणियों एवं रत्नों से भूषित शरीरवाला माहेद्र इन्द्र हाथ में श्रेष्ठ परशु को लिए हुए उत्तम अश्व पर चढकर आता है।।९६।।

चन्द्रमा के समान धवल हंस पर आरूढ़ और धवल आतपत्र से चिह्नित ब्रह्मेन्द्र हाथ में निर्मल मणिदण्ड आयुध को लिए हुए आता है।।९७।।

बंभुत्तरो वि इंदो सियचामरविज्जमाण बहुमाणो ।
वाणरपिट्ठम्मि ठिओ पासकरत्थो समोइण्णो।।९८।।
सारसविमाणरूढो तुडियंगदकणयकुंडलाभरणो ।
कोयंडदंडहत्थो लंतवइंदो समोइण्णो।।९९।।
काविट्ठो वि य इंदो मयरविमाणम्मि संठिओ धीरो ।
वरकमल कुसुमहत्थो महाबलो सो समोइण्णो।।१००।।
वरचक्कवायरूढो फलिहामलरयणकुंढलाहरणो ।
पूयफलगुच्छहत्थो सुक्कसुरो सो समोइण्णो।।१०१।।
महसुक्कसुराहिवई सुरवरपरिवारिओ महासत्तो।
पुप्फकविमाणरूढो गयहत्थो सो समोइण्णो।।१०२।।
सदरविमाणाहिवई मंगीलणिवहेहि तूरसद्देहि ।
परहुअविमाणरूढो तोमरहत्थो समोइण्णो।।१०३।।
गरूडविमाणारूढो णाणाभरणेहिं भूसियसरीरो ।
हलमुसलभूसियकरो सहसारिंदो समोइण्णो।।१०४।।

धवल चामरों से वीज्यमान, बहुत आदर से संयुक्त और वानर की पीठ पर स्थित ब्रह्मोत्तर इन्द्र भी हाथ मे पाश को लिए हुए आता है।।९८।।

त्रुटित (हाथ का आभरण विशेष), अंगद एवं सुवर्णमय कुण्डल रूप आभरणों से भूषित लान्तव इन्द्र हाथ में धनुर्दण्ड को लिये हुए सारस विमान पर चढ़कर आता है।।९९।।

मकर विमान पर स्थित, धीर और महा बलवान् वह कापिष्ठ इन्द्र भी हाथ में उत्तम कमल कुसुम को लिए हुए आता है।।१००।।

उत्तम चक्रवाक पर आरूढ़ और स्फटिकमणिमय निर्मल रत्नकुण्डल रूप आभरणों से विभूषित वह शुक्रइन्द्र हाथ में सुपाड़ी के गुच्छे को लिये हुए आता है।।१०१।।

श्रेष्ठदेवों से वेष्टित, महा बलवान् वह महाशुक्र इन्द्र हाथ में गदा को लिए पुष्पक विमान पर आरूढ़ होकर आता है।।१०२।।

परभृत (कोयल) विमान पर आरूढ़ शतार विमान का अधिपति मंगलमय वादित्रशब्दों के साथ हाथ में तोमर (बाण विशेष) लेकर आता है।।१०३।।

गरूड़ विमान पर आरूढ़ और नाना भूषणों से भूषित शरीर वाला सहस्रार इन्द्र हाथ मे हल और मूसल को लेकर आता है।।१०४।।

संखेंदुकुंदवण्णो सियचामरविज्जमाण बहुमाणो ।
सियकुसुममालहत्थो आणदइंदो समोइण्णो।।१०५।।
पाणदइंदो वि तहा कमलविमाणम्मि तत्थ चडिऊणं।
वरकमलमालहत्थो हरिसाउण्णो समोइण्णो।।१०६।।
णलिणविमाणरूढो णवचंपयविमलमालकयहत्थो ।
पजलंतमहामउडो आरणइंदो अणुप्पत्तो।।१०७।।
कुमुदविमाणारूढो कडयंगदमउडकुंडलाहरणो ।
मुत्तादामकरग्गो अच्चुदइंदो अणुप्पत्तो।।१०८।।
अवसेसा वि य देवा सगसगजंपाणवाहणारूढा ।
णाणापहरणहत्था सगसगसोभाहिं संपत्ता।।१०९।।
भवणवइवाणविंतरजोइसिया कुंडलंकियागंडा ।
णाणावाहणरूढा असुरिंदाई अणुप्पत्ता ।।११०।।
धुव्वंतचारूचामरवज्जंतमहंततूरणिग्घोसा ।
सेदादवत्तचिण्हा असुरिंदा आगदा बहवा।।१११।।

शंख, चन्द्र एवं कुंद पुष्प के समान वर्णवाला, धवल चामरों से वीज्यमान और अतिशय आदर से युक्त आनत इन्द्र हाथ में धवल कुसुमों की माला को लेकर आता है।।१०५।।

हर्ष से परिपूर्ण प्राणत इन्द्र भी हाथ में उत्तम कमलों की माला को लिए हुए कमल विमान पर आरूढ़ होकर आता है।।१०६।।

नलिन विमान पर आरूढ़ और देदीप्यमान महामुकुट से संयुक्त आरण इन्द्र हाथ में नवचम्पक की निर्मल माला को लेकर आता है।।१०७।।

कुमुद विमान पर आरूढ़ और कटक, अंगद, मुकुट एवं कुण्डल रूप आभरणों से भूषित अच्युत इन्द्र हाथ में मुक्ताओं की माला को लेकर आता है।।१०८।।

अपने अपने जम्पान वाहनों पर आरूढ़ शेष देव भी नाना आयुधों को हाथ में लेकर अपनी अपनी शोभाओं के साथ आते हैं।।१०९।।

कुण्डलों से अलंकृत कपोलों वाले भवनपति, वानव्यन्तर और ज्योतिषी असुरेन्द्र आदि नाना वाहनों पर आरूढ़ होकर आते हैं।।११०।।

ढुरते हुए सुन्दर चामरों से और बजते हुए महा वादित्रों के निर्घोष से सहित तथा धवल आतपत्र रूप चिह्न से संयुक्त असुरेन्द्र आते हैं।।१११।।

एवं आगंतूणं अट्ठमिदिवसेसु मंदरगिस्सि ।
जिणभवणेसु य पडिमा जिणिंदइंदाण पूयंति।।११२।।
अट्ठसहस्सेहिं तहा खीरोवहिसलिलपुण्णकलसेहिं ।
ण्हावंति पहिट्ठमणा परमाए भत्तिराएण।।११३।।
पडुपडहसंखकाहलमद्दलकंसालतालणिवहेहिं ।
वज्जंतपवरतूरं महिमं कुव्वंति देविंदा।।११४।।
गोसीसमलयचंदणकुंकुमपंकेहि चच्चियं काउं ।
वरपंचवण्णणिम्मलसुगंधदामेहिं अच्चंति।।११५।।
ससिधवलसुरहिकोमलणाणाविहभक्खभोज्जमादीहिं।
पूयंति जिणवरिंदे ससुरासुरसुरगणा सव्वे।।११६।।
दीवेहि य धूवेहि य चरूअक्खयफलविचित्तकुसुमेहि।
अच्चंति य पुयंति य पहिट्ठमणसा सुरा सव्वे।।११७।।
एवं पूएऊणं वंदंति विसुद्धभावहियएण ।
चदुमंगलचदुसरणा विसुद्धसम्मत्तसंजुत्ता।।११८।।

इस प्रकार आकर वे देव अष्टाह्निक दिनों में मन्दर पर्वत के जिनभवनों में जिनेन्द्रप्रतिमाओं की पूजा करते हैं।।११२।। तथा वे मन में हर्षित होकर क्षीरसमुद्र के जल से परिपूर्ण एक हजार आठ कलशों द्वारा उत्कृष्ट भक्ति राग से अभिषेक करते हैं।।११३।। वे देवेन्द्र पटु पटह, शंख, काहल, मर्दल, कास्यांल और ताल समूहों के साथ उत्तम वादित्रों को बजाते हुए उत्सव को करतें हैं।।११४।।

उक्त देव उन्हें गोशीर्ष, मलयचन्दन और कुंकुम-पंक से लिप्त करके उत्तम पांच वर्ण की निर्मल व सुगन्धित मालाओं से पूजा करते हैं।।११५।।

सुरों व असुरों के साथ सब देवगण चन्द्रवत् धवल, सुगन्धित एवं कोमल नाना प्रकार के भक्ष्य नैवेद्यों के द्वारा जिनेन्द्र देव की पूजा करते हैं ।।११६।।

सब देव मन में हर्षित होकर दीप, धूप, चरु, अक्षत, फल एवं विचित्र कुसुमों से जिनभगवान् की अर्चा व पूजा करते हैं।।११७।।

इस प्रकार से पूजा करके वे ह्रदय में निर्मल भावों को धारण कर चार मंगलों (चत्तारि मंगलं, अरिहंत मंगलं, सिद्ध मंगलं, साहु मंगल, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं), चतुः शरणों (चत्तारि सरणं पवज्जामि - अरिहंत सरणं पवज्जामि, सिद्ध सरणं पवज्जामि, साहु सरणं पवज्जामि, केवलिपण्णत्तो धम्मो सरणं पवज्जामि) और विशुद्ध सम्यक्त्व से संयुक्त होते हुए वन्दना करते हैं ।। ११८ ।।

एवं थोऊण जिणं अमरिंदा अमलपुण्णसंजुत्ता ।
जेणागदा पडिगदा घेत्तूणं धम्मवररयणं।।११९।।
णंदीसरम्मि दीवे जिणवरभवणा हवंति एमेव ।
वुंडलदीवेसु तहा मणुसुत्तरुजगसेलेसु।।१२०।।
जह भद्दसालसुवणे जिणभवणावण्णणा हवे सयला।
तह णंदीसरदीवे जिणभवणावण्णणा होइ।।१२१।।
जिणभवणथूहमंडवपेक्खाघरकप्परूक्खधयणिवहा।
वणसंडवाविगोउरपायारा वेइया दिव्वा।१२२।।
उच्छेहा आयामा विक्खंभवगाह ताण सव्वाणं ।
णंदीसरवरदीवे सरिसा ते होंति पढमवणे।।१२३।।
णंदणसोमणपंडुववणाण भवणा हवंति एमेव ।
णवरि विसेसो जाणे अद्धद्धा होंति णिद्दिट्ठा।।१२४।।
चउविहसुरगणणमियं अइसयचउतीससंजुयं परमं ।
वरपउमणंदिणमियं चंदप्पहजिणवरं वंदे[1]।।१२५।।

।।समाप्तम्।।

इस प्रकार जिन भगवान् की स्तुति करके निर्मल पुण्य से संयुक्त वे देवेन्द्र जिस रूप से आये थे उसी रूप से धर्मरूपी उत्तम रत्न को ग्रहण करके वापिस चले जाते हैं।।११९।।

इसी प्रकार ही नन्दीश्वर द्वीप में, कुण्डलवर द्वीप में, और मानुषोत्तर पर्वत व रूचक पर्वत पर भी जिनभवन हैं।।१२०।।

जिस प्रकार भद्रशाल वन में जिनभवनों का सम्पूर्ण वर्णन किया गया है उसी प्रकार नन्दीश्वर द्वीप में स्थित जिनभवनों का भी वर्णन समझना चाहिये।।१२१।।

जिनभवन सम्बन्धी स्तूप, मण्डप, प्रेक्षागृह, कल्पवृक्ष व ध्वजा समूह, वनखण्ड, वापी, गोपुर, प्राकार और दिव्य वेदिका इन सबका उत्सेध , आयाम, विष्कम्भ व अवगाह नन्दीश्वर द्वीप में प्रथम (भद्रशाल) वन के सदृश है।।१२२-१२३।।

नन्दन, सौमनस और पाण्डुक वनों के जिनभवन भी इसी प्रकार के हैं । विशेष केवल इतना जानना चाहिये कि वे प्रमाण में क्रमशः आधे आधे निर्दिष्ट किये गये हैं।।१२४।।

मैं चार प्रकार के देवगणों द्वारा नमस्कृत, चौंतीस अतिशयों से संयुक्त और उत्तम पद्मनन्दि से नमस्कृत श्रेष्ठ चन्द्रप्रभ जिनेन्द्र की वन्दना करता हूँ ।।१२५।।

।।समाप्त ।।

---

1. जम्बूद्वीपपण्णत्ती पृ. 87 से 99 तक।

मेरु के जिनमंदिर

(लोकविभाग से)

दैर्घ्यं योजनपञ्चाशद्विस्तारस्तस्य चार्धकम् ।
सप्तत्रिंशद्द्विभागश्च चैत्यस्योच्छ्रय इष्यते।।२९०।।

३७ । १/२।

चतुर्योजनविस्तारं द्वारमष्टोच्छ्रयं पुनः।
तनुद्वारे च तस्यार्धमाने क्रोशावगाढकम् ।।२९१।।
सौमनसेषुकारेषु मानुषोत्तरकुण्डले।
वक्षारकुलशैलेषु रुचकाद्रौ च मञ्जुले।।२९२।।त्रिकम्
अष्टौ दीर्घो द्विविस्तारश्चत्वारि च समुच्छ्रितः।
गव्यूतिमवगाढश्च देवच्छन्दो मनोहरः।।२९३।।
रत्नस्तम्भधृतश्चारुसूर्यादिमिथुनोज्ज्वलः ।
नानापक्षिमृगाणां च युग्मैर्नित्यमलंकृतः।।२९४।।
अष्टोत्तरशतं गर्भगृहाणि जिनमन्दिरे।
तत्र स्फटिकरत्नोद्घपीठाणि रुचिराणि तु।।२९५।।

सौमनस वन, इषुकार पर्वत, मानुषोत्तर पर्वत, कुण्डल गिरि, वक्षार पर्वत, कुलाचल और रमणीय रुचक पर्वत; इनके ऊपर स्थित जिनभवन की लम्बाई पचान (५०) योजन, विस्तार उससे आधा (२५ योजन) तथा ऊँचाई सैंतीस योजन और एक योजन के द्वितीय भाग (३७ १/२ यो.) प्रमाण मानी जाती है। (प्रत्येक जिनभवन में एक महाद्वार और दो क्षुद्रद्वार होते हैं) उसके महाद्वार का विस्तार चार (४) योजन और ऊँचाई आठ (८) योजन प्रमाण होती है। क्षुद्रद्वारों का प्रमाण महाद्वार की अपेक्षा आधा होता है। जिनभवन का अवगाढ (नींव) एक कोस मात्र होता है।।२९०-२९२।।

जिनभवन का मनोहर देवच्छंद आठ (८) योजन लम्बा, दो (२) योजन विस्तीर्ण, चार (४) योजन ऊँचा तथा एक कोस अवगाहवाला होता है।।२९३।।

उक्त देवच्छंद रत्नमय खम्भों के आश्रित, सुन्दर सूर्यादिके युगलों से उज्ज्वल, तथा अनेक पक्षियों एवं मृगों के युगलों से नित्य ही अलंकृत होता है।।२९४।।

जिनमन्दिर में एक सौ आठ (१०८) गर्भगृह और उनमें स्फटिक एवं रत्नों से प्रशस्त रमणीय सिंहासन होते हैं।।२९५।।

अष्टोत्तरशतं तत्र पर्यङ्कासनमाश्रिताः।
जिनार्चा रत्नमय्यः स्युर्धनुः पञ्चशतोन्नताः।।२९६।।
द्वात्रिंशन्नागयक्षाणां मिथुनप्रतियातनाः।
चामराङ्कितहस्ताः स्युः प्रत्येकं रत्ननिर्मिताः।।२९७।।
सनत्कुमारसर्वाण्हयक्षयोः प्रतिबिम्बके।
श्रीदेवीश्रुतदेव्योश्च प्रतिबिम्बे जिनपार्श्वयोः।।२९८।।
भृङ्गारकलशादर्शा वीजनं ध्वजचामरे।
सुप्रतिष्ठातपत्रे चेत्यष्टौ सन्मङ्गलान्यपि।।२९९।।
अष्टोत्तरशतं तानि मङ्गलानि पृथक्-पृथक्।
रत्नोज्ज्वलानि राजन्ते प्रतिमोभयपार्श्वयोः।।३००।।
देवच्छन्दाग्रमेदिन्यां मध्ये श्रीजैनमन्दिरम् ।
द्वात्रिंशत्सहस्राणि कलशाः सौवर्णराजताः।।३०१।।
पार्श्वयोश्च महाद्वारः प्रत्येकं द्विहतानि च।
षट्सहस्राणि राजन्ते घटानां धूपसंभृताम् ।।३०२।।
महाद्वारस्य बाह्ये च पार्श्वयोरुभयोः पृथक्।
चत्वारि च सहस्राणि लम्बन्ते रत्नमालिकाः।।३०३।।

वहाँ पर्यंक आसन के आश्रित अर्थात् पद्मासन से स्थित और पाँच सौ धनुष ऊँची एक सौ आठ (१०८) रत्नमयी जिनप्रतिमाएँ विराजमान होती हैं।।२९६।।

वहाँ हाथों में चामरों को धारण करने वाली व प्रत्येक रत्नों से निर्मित ऐसी बत्तीस नाग-यक्षों के युगलों की मूर्तियाँ होती हैं।।२९७।।

प्रत्येक जिनबिम्ब के दोनों पार्श्व भागों में सनत्कुमार और सर्वाण्ह यक्षों के तथा श्रीदेवी और श्रुतदेवी के प्रतिबिम्ब होते हैं।।२९८।। भृंगार, कलश, दर्पण, वीजना, ध्वजा, चामर, सुप्रतिष्ठ और छत्र; ये आठ उत्तम मंगलद्रव्य हैं। रत्नों से उज्ज्वल वे मंगलद्रव्य प्रतिमाओं के उभय पार्श्व भागों में पृथक्-पृथक् एक सौ आठ (१०८) विराजमान होते हैं।।२९९-३००।। जिनमन्दिर के मध्य में देवच्छंद की अग्रभूमि (वसति) में सुवर्णमय व रजतमय बत्तीस हजार (३२०००) घट होते हैं।।३०१।।

प्रत्येक महाद्वार के दोनों पार्श्व भागों में दो से गुणित छः हजार अर्थात् बारह हजार (१२०००) धूप से परिपूर्ण घट (धूपघट) विराजमान होते हैं।।३०२।।

महाद्वार के बाहर दोनों पार्श्व भागों में पृथक्-पृथक् चार-चार हजार रत्नमालाएँ लटकती रहती हैं।।३०३।।

तद्रत्नमालिकामध्ये लम्बन्ते हेममालिकाः।
त्रिहताष्टसस्राणि मिलित्वा कान्तिभासुराः।।३०४।।
। २४००० ।
कानकाः कलशा हेममालिका धूपसद्घटाः।
द्विगुणाष्टसहस्राणि प्रत्येकं मुखमण्डपे।।३०५।।
मधुरझणझणारावा मुक्तारत्नविनिर्मिताः।
सकिंकिणीकास्तन्मध्ये राजन्ते घण्टिकाचयाः।।३०६।।
क्षुल्लकद्वारयोरग्रे मणिमालादिसर्वकम् ।
महाद्वारोक्तसर्वेषामर्धमानं प्रचक्षते।।३०७।।
वसत्याः पृष्ठभागे च मणिमालाष्टसहस्रकम् ।
त्रिगुणाष्टसहस्राणि लम्बन्ते हेममालिकाः।।३०८।।
अस्त्यग्रे जिनवासस्य मञ्जुलो मुखमण्डपः।
ध्वजादिभिश्च संयुक्तस्तस्मात्प्रेक्षणमण्डपः।।३०९।।
आस्थानमण्डपस्तस्मात् स्तूपा नव पुरः पुरः।
द्वादशाम्बुजवेदीभिर्जिनसिद्धार्चाभिरन्विताः।।३१०।।

उन रत्नमालाओं के बीच में कान्ति से दैदीप्यमान सब मिलकर तीन से गुणित आठ हजार अर्थात् चौबीस हजार (२४०००) सुवर्ण मालाएँ लटकती रहती हैं।।३०४।।

मुखमण्डप में सुवर्णमय कलश, हेममाला और धूपघट इनमें से प्रत्येक द्विगुणित आठ हजार अर्थात् सोलह हजार (१६०००) होते हैं।।३०५।।

मुखमण्डप के मध्य में मधुर झनझन ध्वनि से संयुक्त, मोती व रत्नों से निर्मित और क्षुद्र घंटियों से सहित ऐसे घंटाओं के समूह विराजमान होते हैं।।३०६।।

क्षुद्रद्वारों के आगे स्थित उपर्युक्त मणिमाला आदि का प्रमाण महाद्वार के विषय में कही गई उन सबसे आधा-आधा कहा जाता है।।३०७।।

वसती के पृष्ठ भाग में आठ हजार (८०००) मणिमालाएँ और तीन से गुणित आठ हजार अर्थात् चौबीस हजार (२४०००) सुवर्ण मालाएँ लटकती होती हैं।।३०८।।

जिनालय के आगे ध्वजा आदिकों से संयुक्त रमणीय मुखमण्डप तथा उसके आगे प्रेक्षणमण्डप होता है।।३०९।।

इस प्रेक्षणमण्डप के आगे आस्थानमण्डप और उसके भी आगे जिन व सिद्धों की प्रतिमाओं से तथा बारह पद्मवेदिकाओं से संयुक्त नौ स्तूप होते हैं।।३१०।।

ततो द्वादशवेदीभिर्जिनसिद्धार्चाभिरन्वितौ।
चैत्यसिद्धार्थवृक्षौ स्तस्ततोऽपि च महाध्वजाः।।३११।।
तत्पुरो जिनवासः स्याच्चतुर्दिक्ष्वपि तस्य च।
चतस्रो वापिका मुक्तमत्स्याद्या निर्मलाम्भसः।।३१२।।
तत्पुरोभयपार्श्वे च वीथ्याः प्रासादयुग्मकम् ।
तत्पुरस्तोरणं रम्यं तस्मात्प्रासादयोर्द्वयम् ।।३१३।।
सर्वाण्येतानि संवेष्ट्य हैमी वेदी मनोरमा।
राजते केतुभिस्तुङ्गैश्चर्याट्टालकादिभिः।।३१४।।
तत्पुरश्च चतुर्दिक्षु रत्नस्तम्भाग्रसंस्थिताः।
मन्दगन्धवहाधूता राजन्ते दशधा ध्वजाः।।३१५।।
सिंहगजवृषभखगपतिशिखिशशिरविहंसकमलचक्राङ्काः।
अष्टोत्तरशतसंख्याः पृथक्-पृथक् क्षुल्लकाश्च तत्प्रमिताः।।३१६।।
चतुर्दिक्षु महाध्वजा ४३२०। क्षुल्लकध्वजा ४६६५६०। समस्तध्वजा ४७०८८०।

उनके आगे बारह वेदियों एवं जिन व सिद्ध प्रतिमाओं से संयुक्त चैत्यवृक्ष और सिद्धार्थवृक्ष होते हैं। उनके भी आगे महाध्वजाएँ होती हैं ।।३११।। उनके आगे जिनभवन और उसकी चारों ही दिशाओं में मत्स्य आदि जलजन्तुओं से रहित निर्मल जलवाली चार वापिकाएँ होती हैं।।३१२।। उनके आगे वीथी के उभय पार्श्वभाग में प्रासादयुगल, उसके आगे रमणीय तोरण और उसके आगे दो प्रासाद होते हैं।।३१३।। इन सबको वेष्टित करके स्थित मनोहर सुवर्णमय वेदी उन्नत ध्वजाओं, चर्या (मार्गों) व अट्टालयों से सुशोभित होती है।।३१४।। उसके आगे चारों दिशाओं में रत्नमय खम्भों के अग्रभाग में स्थित और मन्द वायु से कम्पित दस प्रकार की ध्वजाएँ विराजमान होती हैं।।३१५।। सिंह, गज, बैल,गरुड़, मयूर, चन्द्र, सूर्य, हंस, कमल, और चक्र से चिह्नित वे ध्वजाएँ संख्या में अलग-अलग एक सौ आठ (१०८) होती हैं। क्षूद्रध्वजाएँ भी पृथक्-पृथक् उतनी मात्र (१०८-१०८) होती हैं।।३१६।।

सिंहादि से अंकित उन दस प्रकार की महाध्वजाओं में से एक दिशागत प्रत्येक ध्वजा की संख्या १०८ है अतः एक दिशागत दस प्रकार की समस्त ध्वजाओं की १०८ × १० = १०८० हुईं, चारों दिशाओं की इन ध्वजाओं की संख्या १०८० × ४ =४३२० हुई। इनमें एक-एक महाध्वजा के आश्रित उपर्युक्त दस प्रकार की क्षुद्रध्वजाएँ भी प्रत्येक १०८ - १०८ हैं, अतः एक-एक महाध्वजा के आश्रित क्षुद्रध्वजाओं की संख्या १० × १०८ × १०८ = ११६६४०, चारों दिशाओं में स्थित क्षुद्रध्वजाओं की

ध्वजावनिं च संवेष्ट्य हैमी वेदी विराजते।
योजनप्रमितोत्तुङ्गा कोशार्धव्याससंयुता।।३१७।।
ततोऽशोकवनं रम्यं सप्तच्छदवनं तथा।
चम्पकाख्यवनं चारु चूताभिख्यं वनं महत्।।३१८।।
ते प्रागारभ्य तिष्ठन्ति प्रादक्षिण्येन तानि च।
वनप्रणिधिमध्ये च मानस्तम्भो विभाति च।।३१९।।
संवेष्ट्य तद्वनं रम्यो रत्नसालो विराजते।
चतुर्गोपुरसंयुक्तश्चर्याट्टालादिसंयुतः ।।३२०।।
योजनानां शतं दीर्घं तदर्धं चापि विस्तृतम् ।
पञ्चसप्ततिमुद्विद्धमर्धयोजनगाधकम् ।।३२१।।
द्वारमस्याष्टविस्तारं षोडशोच्छ्रयमुच्यते।
तदर्धमाने द्वे चान्ये तनुद्वारे प्रकीर्तिते।।३२२।।
एवंमानानि चत्वारि भद्रसाले चतुर्दिशम् ।
नन्दनेऽपि च चत्वारि भाद्रसालैः समानि च।।३२३।।

समस्त संख्या ११६६४० × ४ = ४६६५६०; महाध्वजा ४३२० × क्षुद्रध्वजा ४६६५६० = ४७०८८०; यह चारों दिशाओं में समस्त ध्वजाओं की संख्या हुई।

ध्वजाभूमि को वेष्टित करके सुवर्णमय वेदिका विराजती है। इसकी ऊँचाई एक योजन और विस्तार आधे कोस प्रमाण होता है।।३१७।।

वेदिका के आगे रमणीय अशोकवन, सप्तच्छदवन, सुन्दर चम्पक नामक वन तथा आम्र नामक वन; ये चार विशाल वन होते हैं।।३१८।।

वे वन पूर्व दिशा को प्रारम्भ करके प्रदक्षिण क्रम से स्थित होते हैं। वन के ठीक मध्य में मानस्तम्भ सुशोभित होता है।।३१९।।

उन वन को वेष्टित करके रमणीय रत्नमय प्राकार विराजमान होता है। वह प्राकार चार गोपुरद्वारों से संयुक्त तथा चर्यालय एवं अट्टालय आदिकों से संयुक्त होता है।।३२०।।

सौ (१००) योजन लंबा, उससे आधा (५० योजन) विस्तृत, पचत्तर (७५) योजन ऊँचा और आधे योजन मात्र गहराई से संयुक्त ऐसा जो उत्कृष्ट जिनभवन होता है उसका मुख्य द्वार आठ योजन विस्तीर्ण और सोलह योजन ऊँचा कहा जाता है। उसके अन्य दो लघुद्वार मुख्य द्वार की अपेक्षा आधे प्रमाण वाले कहे गए हैं। इस प्रकार के प्रमाण वाले चार जिनभवन भद्रसाल वन में चारों दिशाओं में सुशोभित हैं। भद्रसाल वन

सौमनसार्धमानानि पाण्डुकायतनानि च।
अर्हदायतनान्येवं सर्वमेरुषु लक्षयेत् ।।३२४।।
विजयार्धेषु सर्वेषु जम्बुशाल्मलिवृक्षयोः।
जिनवासप्रमाणानि भारतेन समानि च।।३२५।।
कूटानां पर्वतानां च भवनानां महीरुहाम् ।
वापीनामपि सर्वासां वेदिका स्थलवद्भवेत्[1]।।३२६।।

।। समाप्तम्।।

में स्थित इन जिनभवनों के ही समान नन्दन वन में भी चार जिनभवन विराजमान हैं। सौमनस वन में स्थित पूर्वोक्त जिनायतनों की अपेक्षा आधे प्रमाण वाले पाण्डुक वन के जिनायतन हैं। इसी प्रकार सब (५) मेरुओं के ऊपर स्थित जिनभवन समझना चाहिए।।३२१-३२४।।

सब विजयार्धों और जम्बू एवं शाल्मलि वृक्षों के ऊपर स्थित जिनालयों के प्रमाण भरतक्षेत्रस्थ विजयार्ध आदि के ऊपर स्थित जिनालयों के समान हैं। (आयाम १ कोस, विस्तार आधा (१/२) कोस, ऊँचाई पौन (३/४) कोस; मुख्य द्वार की ऊँचाई ३२० धनुष और विस्तार १६० धनुष) ।।३२५।।

कूटों, पर्वतों, भवनों, वृक्षों और सब वापियों के भी स्थल के समान वेदिका हुआ करती है।।३२६।।

।। समाप्त ।।

ॐ ह्रीं अर्हं
त्रैलोक्यजिनालयजिनबिम्बेभ्यो
नमः।

1. लोकविभाग, पृ. 37 से 40

भद्रशालवन के जिनमन्दिर

(सिद्धान्तसार दीपक से)

अथ मेरोश्चतुर्दिक्षु भद्रशालवनस्थितान् ।
वर्णयामि मुदोत्कृष्टांश्चतुरः श्रीजिनालयान्।।६।।
अद्रेःपूर्वादिशाभागे योजनैकशतायतः।
पञ्चाशद् विस्तृतस्तुङ्गः पञ्चसप्ततियोजनैः।।७।।
कोशद्वयावगाहश्च विचित्रमणिचित्रितः।
अद्भुतः स्याज्जिनागारस्त्रैलोक्यतिलकाह्वयः।।८।।
अस्य पूर्वप्रदेशेऽस्ति चोत्तरे दक्षिणे महत् ।
एकैकमूर्जितं द्वारं रत्नहेममयं परम् ।।९।।
राजते नितरां द्वारं तयोः पूर्वस्थमादिमम्।
अष्टयोजनविस्तीर्णं तुङ्गं षोडशयोजनैः।।१०।।
दक्षिणोत्तरदिग्भागस्थे द्वे द्वारे परे शुभे।
भातोऽष्टयोजनोत्तुंङ्गे चतुर्योजन विस्तरे।।११।।

अब भद्रशाल वन में स्थित जिनालयों के प्रमाण का वर्णन करते हैं :—

अर्थ :— सुमेरुपर्वत की चारों दिशाओं में भद्रशाल वन है जिसमें उत्कृष्ट चार जिनालय हैं, अब मैं (आचार्य) उन जिनालयों का प्रसन्नता पूर्वक वर्णन करता हूँ।।६।।

सुदर्शन मेरु की पूर्व दिशा (भद्रशाल वन) में नाना प्रकार की मणियों से रचित त्रैलोक्यतिलक नाम का एक अद्भुत जिनालय है, जो सौ योजन लम्बा, पचास योजन चौड़ा, पचहत्तर योजन ऊँचा और अर्ध योजन अवगाह (नींव) वाला है।।७-८।।

त्रैलोक्यतिलक जिनालय के दरवाजों का वर्णन :—

अर्थ :— इस त्रैलोक्य तिलक जिनभवन के पूर्व, उत्तर और दक्षिण में रत्न एवं स्वर्णमय एक-एक उत्कृष्ट द्वार हैं। उत्तर-दक्षिण दोनों के मध्य पूर्व दिशा में स्थित प्रथम द्वार अत्यन्त शोभायमान है, जिसकी ऊँचाई सोलह योजन और चौड़ाई आठ योजन प्रमाण है। जिनालय की दक्षिणोत्तर दिशा में जो एक-एक द्वार सुशोभित हैं उनकी ऊँचाई आठ योजन और चौड़ाई चार योजन प्रमाण है।।९-११।।

भवनस्यास्य चाभ्यन्तरे पूर्वे विस्फुरन्त्यलम् ।
विचित्रामणिमालाश्चाष्टसहस्राणिलम्बिताः।।१२।।
तासामन्तरभागेषु चतुर्विंशतिसम्मिताः।
सहस्राणां विराजन्ते माला रत्नांशुसञ्चयैः।।१३।।
चतुर्विंशसहस्राणि दिव्या धूपघटाः शुभाः।
सुगन्धि द्रव्य धूपैः स्युः सुगन्धीकृतदिग्मुखाः।।१४।।
स्युर्द्वात्रिंशत्सहस्राणि कलशा भानुतेजसः।
सुगन्धिदामराशीनां सन्मुखा मणिहेमजाः।।१५।।
तद्बहिर्भागदेशेषु मणिमालाः प्रलम्बिताः।
चत्वारि च सहस्राणि सन्ति दीप्ता मनोहराः।।१६।।
द्वादशैवसहस्राणि स्युः काञ्चनस्त्रजोऽमलाः।
तस्मिन्नेव बहिर्भागे दिव्याधूपघटाः स्मृताः।।१७।।
द्विषट्सहस्रसंख्याताः सहस्रषोडशप्रमाः।
दीप्ताः काञ्चनकुम्भाश्च स्फुरन्तिस्वाङ्गरश्मिभिः।।१८।।
जिनागारेऽत्र सन्त्येवदीर्घाणिषोडशप्रमैः।
साधिकैर्योजनैर्विस्तृतान्यष्टाधिकयोजनैः।।१९।।

अब जिनालय के अभ्यन्तर एवं बाह्यभागों में स्थित मालाओं, धूपघटों एवं स्वर्ण घटों का प्रमाण आदि कहते हैं :—

अर्थ :— उस जिनालय के अभ्यन्तर भाग में स्थित पूर्व दिशा के द्वार पर अत्यन्त दैदीप्यमान नाना प्रकार की मणियों की आठ हजार मालाएँ लटकती हैं और इनके मध्य में रत्नकिरणों से उपचित चौबीस हजार मालाएँ विराजमान होती हैं। सुगन्धित द्रव्य एवं धूप के द्वारा दिशाओं को सुगन्धित करने वाले चौबीस हजार धूपघट स्थित हैं। सुगन्धित माला समूहों के अभिमुख, सूर्य सदृश तेज-पुञ्ज से संयुक्त बत्तीस हजार मणि एवं स्वर्णमय कलश स्थित हैं। मुख्यद्वार के बाह्यभाग में जो द्वार हैं, उन पर अति मनोहर और दीप्तवान् चार हजार मणिमय मालाएँ और बारह हजार स्वर्णमय मालाएँ हैं। इनके भी बाह्य भाग में बारह हजार प्रमाण दिव्य धूपघट और स्फुरायमान होने वाली अपनी किरणों से दीप्त सोलह हजार स्वर्ण कलश स्थित हैं।।१२-१८।।

अब पीठ, सोपान एवं पीठवेदियों के व्यास आदि का और जिनप्रतिमाओं का वर्णन चौदह श्लोकों द्वारा करते हैं-

अर्थ :— त्रैलोक्यतिलक जिनभवन में वज्र एवं इन्द्रनीलमणिमय एक पीठ है

द्वियोजनोच्छ्रितानि श्रीमत्पीठानिशुभानि च।
वज्रेन्द्रनीलरत्नादिमयानि परमान्यपि।।२०।।
मणिसोपान पंक्तिः स्यात्तत्रदीर्घा च योजनैः।
द्वयष्टभिरष्टभिर्व्यासाषड्योजनोन्नता शुभा।।२१।।
क्रोशद्वयावगाहास्यादष्टोत्तर शतान्यपि।
सोपानानि भवन्त्येवप्रोन्नतानि चतुःशतैः।।२२।।
किञ्चिदूनैश्चचापैः पञ्चचत्वारिंशदग्रग्रैः।
पीठपर्यन्तभागेऽस्ति दिव्याःसद्रत्नवेदिकाः।।२३।।
क्रोशद्वयोन्नताः पञ्चशतचापप्रविस्तृताः।
तेषु पीठेषु दिव्याङ्गा अष्टोत्तरशतप्रमाः।।२४।।
स्फुरन्नानामणिस्वर्णमय्योऽविनश्वराः शुभाः।
धनुः पंचशतोतुङ्गामनोज्ञावीक्षणप्रियाः।।२५।।
निराभरणदीप्ताश्च निरम्बरमनोहराः।
कोट्येकभानुतेजोऽधिक सुतेजो विराजिताः।।२६।।
लक्षणैर्व्यजनैर्युक्ताः पल्यङ्कासनसंस्थिताः।
पूर्णसोममुखाः सौम्याः समस्तविक्रियातिगाः।।२७।।

जो कुछ अधिक सोलह योजन लम्बा, आठ योजन चौड़ा, दो योजन ऊँचा अत्यन्त शुभ और परमोत्कृष्ट है।।१९-२०।।

वहाँ पर सोलह योजन लम्बी, आठ योजन चौड़ी, छः योजन ऊँची और अर्ध योजन नींव से युक्त मणिमय सोपान पंक्ति है तथा उस सोपान पंक्ति में एक सौ आठ सोपान हैं, जिनमें से प्रत्येक सोपान कुछ कम चार सौ पैंतालीस धनुष ऊँचे हैं। पीठ पर दिव्य और उत्तम रत्न वेदियाँ हैं, जो अर्ध धनुष ऊँची और पाँच सौ धनुष चौड़ी हैं। उन वेदिकाओं पर श्री जिनेन्द्र भगवान् की ऐसी एक सौ आठ प्रतिमाएँ सुशोभित हैं, जो अत्यन्त विभावान् मणि एवं स्वर्णमय हैं। अविनश्वर अर्थात् अकृत्रिम हैं। अत्यन्त शुभ, मनोज्ञ, देखने में अति प्रिय और दिव्य अङ्ग वाली हैं। पाँच सौ धनुष ऊँची हैं, वस्त्राभूषणों से रहित अर्थात् दिगम्बर मुद्रा युक्त हैं और करोड़ों सूर्यों के तेज से भी अधिक कान्तिवान् हैं।।२१-२६।।

वे जिनप्रतिमाएँ (१०८) लक्षणों एवं (९००) व्यञ्जनों से युक्त तथा पूर्ण चन्द्र के सदृश मुख वाली हैं। उनकी शरीराकृति अत्यन्त सौम्य और सर्व विकारों से रहित है, वे सभी पद्मासन से स्थित हैं। उनका भामण्डल अन्तर-बाह्य अन्धकार के समूह को नष्ट

दिव्यभामण्डलान्तर्बाह्योच्छेदिततमश्चयाः।
प्रफुल्लपद्मसद्धहस्ता आरक्तचरणाम्बुजाः।।२८।।
अञ्जनाभमहाकेशा अताम्रनयनोत्पलाः।
विद्रुमाभाधराः छत्रत्रयशोभितमस्तकाः।।२९।।
दिव्यसिंहासनारूढा भामण्डलात्तविग्रहाः।
महार्चनार्चितायक्षैर्वीज्यमानाः प्रकीर्णकैः।।३०।।
निरौपम्या जगन्नेत्रप्रियाः पुण्याकरा इव।
हसन्त्यो वा वदन्त्यो वा मुखचन्द्रेण संततम् ।।३१।।
त्रिजगन्नृसुराराध्यावन्द्याः स्तुत्यामया सदा।
राजन्ते श्रीजिनेन्द्राणां प्रतिमादिव्य मूर्तयः।।३२।।
अकृत्रिमा महाभूत्या धर्मोपकरणैः परैः।
प्रत्येकं भिन्नभिन्नैर्मु दाष्टोत्तरशतप्रमैः।।३३।।
अशोकवृक्षशोभाढ्यादेवदुन्दुभिभूषिताः ।
सुरैः कृतमहापुष्पवृष्ट्याच्छादितमूर्तयः।।३४।।
शुद्धस्फटिकभित्त्याढ्यं वैडूर्यस्तम्भशोभितम् ।
नानारत्नप्रभाकीर्णं दिव्यामोदात्तदिग्मुखम् ।।३५।।

करने वाला है। उनके करकमल एवं चरणकमल खिले हुए कमल सदृश अर्थात् कुछ कुछ लाल हैं, केश अञ्जन सदृश काले, नेत्र कमल कालिमा से रहित, ओंठ विद्रुम की आभा सदृश लाल और मस्तक तीन छत्रों से सुशोभित है। दिव्य सिंहासन पर विराजमान उनका शरीर अत्यन्त कान्तिवान् है। वे महापूजा से पूज्य, यक्षों द्वारा वीज्यमान चामरों से युक्त, उपमा रहित, तीन लोक के नेत्रों को अत्यन्त प्रिय और पुण्य की खान के समान हैं। वे जिनप्रतिमाएँ शोभायमान मुख चन्द्र से मानो निरन्तर हँस रहीं हैं और बोल रहीं हैं तथा तीन लोक के मनुष्यों एवं देवों से पूज्य और मेरे द्वारा सदा वन्दनीय एवं स्तुत्य हैं।।२७-३२।।

धर्मोपकरणों (मङ्गलद्रव्यों) का वर्णन :-

अर्थ :-अकृत्रिम और महाविभूति स्वरूप भिन्न-भिन्न मङ्गल द्रव्यों (झारी, कलश, दर्पण, पंखा, ध्वजा, चामर, छत्र ओर ठोनों) की संख्या एक सौ आठ एक सौ आठ हैं। वे प्रतिमाएँ (छत्र, चमर, सिंहासन, भामण्डल और) अशोक वृक्ष की शोभा से युक्त, देवदुन्दुभि से विभूषित और देवों द्वारा की हुई महापुष्पवृष्टि से आच्छादित (व्याप्त) होती हैं।।२-३४।।

गर्भगृह का वर्णन -

अर्थ :-शुद्ध-निर्विकार स्फटिक मणिमय दीवालों से युक्त, वैडूर्यमणिमय खम्भों

जिनेन्द्रप्रतिमानां तद्देवच्छन्दान्यनामधृत् ।
गर्भगृहं जगत्सारं राजते नितरांश्रिया।।३६।।।
सद्रत्नवेदिकाग्रेषु सुपीठ शिखरेषु च।
मणिस्तम्भेषु राजन्ते महान्तोऽत्र ध्वजोत्कराः।।३७।।
सिंहहस्तिध्वजा हंसवृषभाब्ज शिखिध्वजा।
मकरध्वजचक्रातपत्राख्यागरुडध्वजाः ।।३८।।
एते महाध्वजा रम्या दशभेद युताः शुभाः।
प्रत्येकं च पृथग्रूपा अष्टोत्तरशतप्रमाः।।३९।।
एकैक सद्ध्वजानां सम्बन्धिनः क्षुल्लकध्वजाः।
अष्टाग्रशतसंख्याताः सन्ति मुक्तास्त्रगङ्किताः।।४०।।
एते सर्वे ध्वजव्राता गोपुरेभ्यः समुन्नताः।
मुखमण्डपसंज्ञानां त्रयाणां स्युर्बहिर्दिशि।।४१।।
सुवर्णमणिसद्रूप्यमयाश्च योजनोच्छ्रिताः।
स्युः प्राकारास्त्रयस्तत्र महान्तो रचनाङ्किताः।।४२।।
प्राकारंप्रति चत्वारि सद्रत्नगोपुराण्यपि।
सन्त्युत्तुङ्गानि दीप्तानि योजनैः षोडशप्रमैः।।४३।।

से सुशोभित, अनेक प्रकार के रत्नों की प्रभा से व्याप्त, दिव्य आमोद से ग्रहण-सुगन्धित किया है। दिशाओं को जिसने ऐसा जगत के सार स्वरूप जिनेन्द्र प्रतिमाओं सम्बन्धी देवच्छन्द नाम का गर्भगृह अत्यन्त शोभा से सुशोभित होता है।।३५-३६।।

ध्वजाओं, मुखमण्डपों और प्राकारों का निर्धारण करते हैं :-

अर्थ :- श्रेष्ठ रत्न वेदिकाओं के अग्रभाग पर, पीठ के शिखर पर और मणिमय खम्भों के ऊपर महान ध्वजाओं के समूह शोभायमान होते हैं। वे अत्यन्त रमणीय महा- ध्वजा समूह सिंह, हाथी, हंस, वृषभ, कमल, मयूर, मकरध्वज, चक्र, आतपत्र और गरुड़ के भेद से दश प्रकार के हैं। इन प्रत्येक भेदों की भिन्न-भिन्न एक सौ आठ, एक सौ आठ (१०८ × १० = १०८०) ध्वजाएँ होती हैं और उन १०८ ध्वजाओं के भी पृथक्-पृथक् एक सौ आठ, एक सौ आठ छोटी ध्वजाएँ (१०८० × १०८ = ११६६४०) मुक्ता की मालाओं से सुशोभित होती हैं।।३७-४०।। ये समस्त ध्वजाओं के समूह गोपुरों से ऊँचे हैं। तीनों मुखमण्डपों के बाहर तीन कोट हैं। ये तीनों कोट, स्वर्ण, मणि एवं रजतमय हैं, एक योजन ऊँचे तथा महान रचना से सहित हैं। प्रत्येक कोट में उत्तम रत्नों से भास्वर एवं उत्तुङ्ग चार-चार गोपुरद्वार हैं, जो सोलह योजन ऊँचे हैं।।४१-४३।।

शतैकयोजनायामाः पञ्चाशद्विस्तरान्विताः।
क्रोशद्वयावगाहाः प्रोन्नताः षोडशयोजनैः।।४४।।
संतप्तहेमदीप्ताङ्गा विचित्ररत्नचित्रिताः।
नित्योत्सवयुतारम्या विज्ञेया मुखमण्डपाः।।४५।।
तदग्रे योजनानां च शतैकायामविस्तराः।
भवन्त्यर्धावगाहाः प्रोत्तुङ्गाः षोडशयोजनैः।।४६।।
नानारत्नमया रम्याः प्रेक्षागृहा मनोहराः।
तेषां च पुरतः सन्तितुङ्गाः षोडशयोजनैः।।४७।।
योजनानां चतुःषष्टिदीर्घव्यासान्विताः पराः।
हेमरत्नमयास्तेजोजालावृताः सभागृहाः।।४८।।
तेषां सभागृहाणां कांचन पीठानिसन्ति च।
अशीतियोजनायामविस्तृतानि शुभान्यपि।।४९।।
द्वियोजनोच्छ्रितान्युच्चैः पद्मवेदीयुतानि वै।
मनोहराणि रम्याणि प्रदीप्तैर्मणि तोरणैः।।५०।।
तेषां सभालयानां पुरतः स्तूपा नवोर्जिताः।
योजनानां चतुःषष्ट्यायामव्यासोन्नताः शुभाः।।५१।।

तपाये हुए स्वर्ण के सदृश देदीप्यमान, नाना प्रकार के रत्नों से खचित, सदैव होने वाले महामहोत्सवों से युक्त और अत्यन्त रमणीय मुखमण्डप भी सौ योजन लम्बे, पचास योजन चौड़े, सोलह योजन ऊँचे और अर्ध योजन नींव वाले जानना चाहिए।४४,४५।।

अब प्रेक्षागृह एवं सभागृहों का वर्णन करते हैं :-

अर्थ : -उन मुख-मण्डपों के आगे सौ योजन लम्बे, सौ योजन चौड़े, सोलह योजन ऊँचे, अर्ध योजन नींव से युक्त अनेक रत्नों से व्याप्त अत्यन्त रमणीक और मन को हरण करने वाले प्रेक्षागृह हैं। उन प्रेक्षागृहों के आगे सोलह योजन ऊँचे, चौंसठ योजन लम्बे, चौंसठ योजन चौड़े दीप्ति समूह से आवृत्त स्वर्ण एवं रत्नमय उत्तम सभागृह हैं।।४६-४८।।

उन सभागृहों के पीठ स्वर्णमय हैं; तथा अस्सी योजन लम्बे, अस्सी योजन चौड़े और अत्यन्त सुन्दर हैं। वे पीठ दैदीप्यमान मणियों के दो योजन ऊँचे तोरणों से संयुक्त अत्यन्त रमणीक और मनोहर पद्मवेदी से रम्य हैं।।४९-५०।।

अब नवस्तूप और मानस्तम्भ का वर्णन करते हैं :-

अर्थ :-उन सभागृहों के आगे चालीस योजन ऊँचे रत्नमय पीठों पर देव और विद्याधरों से पूजित दैदीप्यमान रत्नमय जिनेन्द्र प्रतिमाओं से संयुक्त, तीन मेखलाओं से

जिनेन्द्रप्रतिमापूर्णा मेखलात्रयसंयुताः।
चतुर्विंशतिसद्धे मवेदीभिर्वेष्टिता पराः।।५२।।
रत्नपीठेषु चत्वारिंशद्योजनोच्छ्रितेषु च।
स्फुरद्रत्नमयाः सन्ति स्थितादेवखगार्चिताः।।५३।।
गोपुराणां बहिर्भागे वीथीनां मध्यभूमिषु।
मानस्तम्भा भवन्त्युच्चै दीप्ता घण्टाद्यलंकृताः।।५४।।
स्तूपानां पुरतो गत्वा हेमपीठं भवेन्महत् ।
सहस्रयोजनायाम विस्तारंमणिभास्वरम् ।।५५।।
युतं द्वादशवेदीभिर्वरं तोरणमंडितम् ।
पीठस्योपरि सन्ति प्रोन्नताः षोडशयोजनैः।।५६।।
अष्टयोजनविस्तीर्णाश्चैत्यवृक्षाः शुभप्रदाः।
रम्याः सिद्धार्थनामानो महान्तः सुरपूजिताः।।५७।।
एकं लक्षं च चत्वारिंशत्सहस्रं तथा शतम् ।
विंशत्यग्रमिमासंख्याविज्ञेया चैत्यशाखिनाम् ।।५८।।
द्रुमाणां भूतलाद्गत्वा चत्त्वारियोजनानि च।
चतुर्दिक्षुचतस्रः स्युर्द्विषट्कयोजनायताः।।५९।।

वेष्टित चौंसठ योजन लम्बे, चौंसठ योजन चौड़े और चौंसठ योजन ऊँचे श्रेष्ठ स्वर्णमय चौबीस वेदियों से परिवेष्टित, अति उत्तम और अत्यन्त सुन्दर नव स्तूप हैं।।५१-५३।।

गोपुरों के बाह्यभाग में तथा वीथियों (गलियों) की मध्यभूमि में अतिशय प्रभावान् और घण्टा आदि से अलंकृत मानस्तम्भ हैं।।५४।।

अब चैत्यवृक्ष का वर्णन सात श्लोकों द्वारा करते हैं।

अर्थ :-स्तूपों के आगे (पूर्व दिशा की ओर) जाकर एक हजार योजन लम्बा और एक हजार योजन चौड़ा, मणियों को प्रभा से दीप्तवान् बारह वेदियों से वेष्टित तथा उत्तम तोरणों से मण्डित एक स्वर्णमय पीठ है। उस पीठ के ऊपर सोलह योजन ऊँचा और आठ योजन चौड़ा अति शोभायुक्त, रमणीक और देवों से पूजित एक सिद्धार्थ नाम का महान चैत्यवृक्ष है।।५५-५७।। उस चैत्यवृक्ष के परिवार वृक्षों की संख्या एक लाख चालीस हजार एक सौ बीस जानना चाहिए।।५८।।

चैत्यवृक्ष के भूमितल भाग से चार योजन ऊपर जाकर बारह योजन लम्बी और एक योजन चौड़ी प्रमाण वाली तथा विनाश से रहित चार महाशाखाएँ चारों दिशाओं में

योजनैकसुविस्तीर्णा महाशाखाः क्षयातिगाः।
मूलेषु चैत्यवृक्षाणां चतुर्दिक्षु मनोहराः।।६०।।
जिनेन्द्रप्रतिमाः शाश्वताः पल्यङ्कासन स्थिताः।
भवेयुर्माणिदीप्ताङ्गा प्रातिहार्यश्रियार्चिताः।।६१।।
ततश्चैत्यद्रुमेभ्योऽनुगत्वा प्राग्दिग्महीतले।
महत्पीठं ध्वजौघानां स्याद्वेदीद्वादशाङ्कितम् ।।६२।।
पीठस्योपरिचोत्तुङ्गा सन्ति षोडशयोजनैः।
क्रोशव्यासामहास्तम्भाः सद्वैडूर्यमयाः शुभाः।।६३।।
स्तम्भानां शिखरेषुस्युर्नानावर्णान्विता ध्वजाः।
छत्रत्रयांकिता मूर्ध्निदिव्यरूपाश्च्युतोपमाः ।।६४।।
ध्वजानांपुरतो वाप्यो दीर्घाः शतैकयोजनैः।
पञ्चाशद्विस्तृताः स्युश्चावगाहा दशयोजनैः।।६५।।
युताः काञ्चनवेदीभिर्मणि तोरणभूषिताः।
निर्जन्तुजलसम्पूर्णाः शाश्वताः कमलाश्रिताः।।६६।।

फैली हैं। चैत्यवृक्षों के मूलभाग की चारों दिशाओं में पल्यङ्कासन (पद्मासन) से स्थित एक-एक जिनेन्द्र प्रतिमाएँ हैं। जो अपनी सुन्दरता से मन को हरण करने वालीं, उत्पत्ति विनाश से रहित, मणियों की दीप्ति से भास्वर शरीर वालीं तथा अष्टप्रतिहार्य आदि लक्ष्मी से सेव्यमान हैं।।५९-६१।।

अब ध्वजापीठ, स्तम्भ, ध्वजासमूह और वापियों का वर्णन पाँच श्लोकों के माध्यम से करते हैं :-

अर्थ :-उस चैत्यवृक्ष से पुनः पूर्व दिशा में जाकर पृथ्वी पर बारह वेदियों से संयुक्त ध्वजा समूहों का एक विशाल पीठ है।।६२।।

उस पीठ के शिखर पर सोलह योजन ऊँचे और एक कोस विस्तार से युक्त वैडूर्यमणिमय अति शोभायुक्त महास्तम्भ (खम्भे) हैं।।६३।।

इन खम्भों के शिखरों पर विविध वर्णों से समन्वित, शिखर पर तीन छत्रों से सुशोभित, दिव्य रूप से सम्पन्न और अनुपम ध्वजाएँ हैं।।६४।।

उन ध्वजाओं के आगे सौ योजन लम्बी, पचास योजन चौड़ी और दश योजन गहरी, स्वर्ण वेदियों से वेष्टित, मणिमय तोरणों से विभूषित, निर्जन्तु अर्थात् स्वच्छ जल से परिपूर्ण और कमलों से व्याप्त, शाश्वत विद्यमान रहने वालीं वापियाँ हैं।।६५-६६।।

वापीनां प्राक्तने भागे ह्युत्तरे दक्षिणे शुभाः।
स्वर्णरत्नमयाः सन्ति प्रासादाः कृत्रिमातिगाः।।६७।।
पञ्चाशद्योजनोत्सेधाः पञ्चविंशति योजनैः।
आयामव्याससंयुक्ता रत्नवेद्याद्यलंकृताः।।६८।।
एषु क्रीडागृहेषूच्चैः देवाः क्रीडां प्रकुर्वते।
तेभ्यः पूर्वदिशंगत्वा विचित्रं रत्नतोरणम् ।।६९।।
स्याद्योजनशतार्धोच्चं पञ्चविंशति विस्तरम् ।
मुक्तादामांकितं रम्यं वरघण्टाचयान्वितम् ।।७०।।
ततोऽस्यतोरणस्यैव पार्श्वयोः स्तो द्वयोः परौ।
द्वौ द्वौ सद्रत्नगेहौ च शतैकयोजनोन्नतौ।।७१।।
ततः परं विचित्राः स्युर्ध्वजव्राताः समुन्नताः।
नानावर्णामहान्तोऽशीतिसहस्त्रप्रमाणकाः ।।७२।।
शततोरण संयुक्ता वनवेदी प्रवेष्टिताः।
ततः परे महीभागे वनखण्डं स्फुरत्प्रभम् ।।७३।।

अब कीड़ा प्रासादों का और तोरणों के विस्तार आदि का वर्णन करते हैं :-

अर्थ :- उन वापियों के पूर्व, उत्तर और दक्षिण भागों में अत्यन्त शुभ, स्वर्ण एवं रत्नमय तथा अकृत्रिम क्रीड़ा प्रासाद हैं। वे क्रीड़ागृह पचास योजन ऊँचे, पच्चीस योजन लम्बे एवं चौड़े और रत्नों की वेदी आदि से अलंकृत हैं। उन क्रीड़ागृहों में देवगण नाना प्रकार की क्रीड़ाएँ करते हैं। उन क्रीड़ागृहों से आगे पूर्व दिशा में जाकर रत्नों से व्याप्त विचित्र तोरण है, जो पचास योजन ऊँचा इससे आधा अर्थात् पच्चीस योजन चौड़ा, मुक्ता माला से संयुक्त, रमणीय एवं उत्तम घण्टा समूह से समन्वित है।।६७-७०।।

अब प्रासादों, ध्वजाओं और वनखंडों का निर्देश करते हैं-

अर्थ :-इसके आगे तोरण के दोनों पार्श्वभागों में सौ-सौ योजन ऊँचे और उत्तम रत्नों के दो-दो भवन हैं।।७१।।

इसके आगे विविध वर्ण के समुन्नत और महान् एक हजार अस्सी (१०८ × १० = १०८०) संख्या प्रमाण विचित्र ध्वजाओं के समूह हैं, जो सौ तोरणों से संयुक्त और उत्तम वनवेदी से परिवेष्टित हैं। इसके आगे पृथ्वीतल पर दैदीप्यमान प्रभा से भासुर वनखण्ड हैं, जो वनवेदी से युत; रत्नतोरणों से संयुक्त, मन को हरण करने वाले, नाना प्रकार की मणि पीठों के अग्रभाग पर स्थित वृक्षसमूहों से सुशोभित, विद्रुम अर्थात्

वनवेदीयुतं रत्नतोरणाढ्यं मनोहरम् ।
विचित्रमणिपीठाग्रस्थितद्रुमौघशौभितम् ।।७४।।
विद्रुमोत्थमहाशाखंहेमपुष्पौघशोभितम् ।
वैडूर्यफलपूर्णमरकताश्मसुपत्रकम् ।।७५।।
चम्पकाशोकवृक्षाम्रसप्तपर्णद्रुमैश्चितम् ।
कल्पपादपसंकीर्णंशाश्वतं स्यात् खशर्मदम् ।।७६।।
तेषां कल्पद्रुमाणांसन्मूले स्युर्जिनमूर्तयः।
चतुर्दिक्षुमहादीप्ताः प्रातिहार्याद्यलंकृताः।।७७।।
इत्यादि रचनाभिश्च यथा यं श्रीजिनालयः।
वर्णितः पूर्वदिग्भागे मेरोराद्यवनेऽखिलः।।७८।।
तथापरे जिनेन्द्राणां मेरोर्दिक्त्रिषु संस्थिताः।
समानवर्णनोपेताज्ञेयाश्चैत्यालयास्त्रयः।।७९।।
इत्येवं वर्णनैः सर्वे जिनालया अकृत्रिमाः।
समानाः सदृशाज्ञेयाः स्थितालोकत्रयेपरे।।८०।।
किन्त्वन्येषां जिनेन्द्रालयानां स्याद्वर्णनापृथक्।
मध्यमानां जघन्यानामायामोत्सेधविस्तरैः।।८१।।

प्रवालमय शाखाओं की शोभा से युक्त, स्वर्ण के पुष्प समूह से समृद्ध, वैडूर्यमय फलों से व्याप्त, मरकत मणि के पत्थरमय उत्तम पत्रों से संकीर्ण, चम्पक, अशोकवृक्ष, आम्र एवं सप्तपर्ण के वृक्षों द्वारा गहन, अन्य कल्पवृक्षों से परिपूर्ण अनाद्यनिधन और इन्द्रियों को सुख देने वाले हैं।।७२-७६।।

अब मेरु के जिन भवनों की अवस्थिति और अन्य वनों आदि में स्थित जिनालयों के विस्तार आदि का वर्णन पाँच श्लोकों द्वारा करते हैं-

अर्थ :-उन कल्पवृक्षों के मूलभाग की चारों दिशाओं में महादीप्तवान् एवं प्रातिहार्य आदि से अलंकृत जिनेन्द्रों की प्रतिमाएँ हैं।।७७।। जिस प्रकार सुदर्शन मेरु के प्रथम-भद्रशाल वन के पूर्व भाग में स्थित श्री जिनमन्दिर का अनेक प्रकार की रचना आदि के द्वारा सम्पूर्ण वर्णन किया है उसी प्रकार सुदर्शन मेरु सम्बन्धी भद्रशाल वन में तीनों दिशाओं में स्थित तीन चैत्यालयों का वर्णन जानना चाहिए।।७८-७९।। इस प्रकार तीन लोक में स्थित अन्य समस्त अकृत्रिम जिनालयों की रचना आदि का समस्त वर्णन उपर्युक्त वर्णन के सदृश ही जानना चाहिये, परन्तु अन्य जिनालयों अर्थात् मध्यम जिनालयों और जघन्य जिनालयों के आयाम, उत्सेध और विस्तार आदि का वर्णन पृथक्-पृथक् है।।८०-८१।।

एषु श्रीजिनगेहेषु कुर्वन्त्युच्चैर्महामहम् ।
जिनेन्द्र दिव्यमूर्तीनामागत्य भक्तिनिर्भराः।।८२।।
चतुर्णिकायदेवेशा देवेदेव्यादिभिः समम् ।
प्रत्यहं स्वर्गलोकोत्थैर्महार्चा द्रव्य भूरिभिः।।८३।।
खगेशाः खचरीभिश्च सहाभ्येत्यात्र पूजनम् ।
अर्हतां विविधं कुर्युर्भक्त्या दिव्याष्टधार्चनैः।।८४।।
चारणा ऋषयो नित्यं जिनेन्द्रगुणरञ्जिताः।
अत्रैत्य जिनचैत्यादीन् प्रणमन्ति स्तुवन्ति च।।८५।।
अन्येऽपि बहवो भव्या प्राप्तविद्या वृषोत्सुकाः।
जिनार्चा अर्चयन्त्यत्र भक्त्या नरोत्तमाः सदा।।८६।।
एषु चाप्सरसो नित्यं कुर्वन्ति नृत्यमूर्जितम् ।
जिनेशगणभृद्दिव्य चरित्रैरीक्षणाप्रियम् ।।८७।।
दिव्यकण्ठाश्च किन्नर्यो गन्धर्वा वीणया समम्।
गायन्ति सारगीतानि तीर्थेश गुणजान्यपि।।८८।।

अब देवों, विद्याधरों एवं अन्य भव्यों द्वारा की जाने वाली भक्ति विशेष का निदर्शन करते हैं :-

अर्थ :-अपूर्व भक्तिरस से भरे हुए चारों निकाय के इन्द्र उत्कृष्ट विभूति, देव देवियों एवं स्वर्ग लोक में उत्पन्न हुई महापूजा के योग्य अपरिमित द्रव्य सामग्री के साथ आकर उपर्युक्त वर्णित श्री जिनालयों में स्थित जिनेन्द्रदेव की दिव्य मूर्तियों की प्रतिदिन महामह पूजन करते हैं।।८२-८३।।

विद्याधरों के अधिपति भी अन्य विद्याधर एवं विद्याधरियों के साथ यहाँ (अकृत्रिम जिन चैत्यालयों में) आकर भक्ति पूर्वक अष्ट प्रकार की दिव्य सामग्री के द्वारा अर्हन्त भगवान की नाना प्रकार से पूजन करते हैं।। ८४।।

जिनेन्द्र के गुणों में अनुरञ्जित है मन जिनका ऐसे चारणऋद्धि धारी मुनिराज नित्य ही मेरु आदि पर आकर जिनेन्द्र प्रतिमाओं को प्रणाम करते हैं और स्तुति करते हैं।।८५।।

अन्य भी और बहुत से विद्या प्राप्त, धर्म उत्सुक एवं मनुष्यों में श्रेष्ठ भव्य जीव भक्ति से प्रेरित होकर यहाँ नित्य ही जिनेन्द्र भगवान् की पूजा करते हैं।।८६।।

और वहाँ पर अप्सराएँ नित्य ही जिनेन्द्र भगवान् एवं गणधर देवों के सर्वोत्तम चारित्र के अभिनय द्वारा, देखने में अत्यन्त प्रिय और श्रेष्ठ नृत्य करती हैं। दिव्य कण्ठ वाली किन्नरियाँ और गन्धर्व वीणा द्वारा जिनेश तीर्थङ्करों के गुणों से उत्पन्न

इत्युत्सवशतैः पूर्णा विश्व चैत्यालया इमे।
संक्षेपेण मया प्रोक्ता महापुण्य निबन्धनाः।।८९।।
यतोऽमीषां पराः शोभा महतीरचनाभुवि।
मुक्त्वा गणाग्रिमं कोऽत्र बुधो वर्णयितुं क्षमः।।९०।।
पञ्चाशद्योजनायामाः पञ्चविंशति विस्तृताः।
सार्धसप्ताधिकैस्त्रिंशद्योजनैः प्रोन्नताः शुभाः।।९१।।
द्विगव्यूत्यवगाहाः स्युर्मध्यमाः श्रीजिनालया।
अमीषां मुख्य सुद्वारमुत्तुङ्गमष्टयोजनैः।।९२।।
चतुर्योजनविस्तीर्णं चान्यद् द्वारद्वयं भवेत् ।
चतुर्भियोजनैस्तुङ्गं योजनद्वय विस्तरम् ।।९३।।
पञ्चविंशति संख्यानैर्योजनैरायाः परे।
क्रोशद्वयाधिकद्वादश योजन सुविस्तृताः।।९४।।
त्रिकक्रोशाधिकाष्टादशयोजन समुन्नताः।
द्वयक्रोशावगाहाः स्युर्जघन्याः श्रीजिनालयाः।।९५।।

हुए गीत तथा और भी सारगर्भित उत्तम गीत गाते हैं। इस प्रकार ये समस्त अकृत्रिम चैत्यालय सहस्रों महोत्सवों से व्याप्त रहते हैं। महा पुण्य बन्ध के हेतुभूत इन चैत्यालयों का वर्णन मेरे (आचार्य) द्वारा संक्षिप्त रूप से किया गया है, क्योंकि लोक में उत्कृष्ट शोभा और महान् रचनाओं से व्याप्त इन अकृत्रिम चैत्यालयों का सम्पूर्ण वर्णन करने के लिए तीर्थङ्कर को छोड़कर अन्य कौन विद्वान् समर्थ है ? अर्थात् कोई नहीं है।। ८७-९०।।

अब मध्यम जिनालयों एवं उनके द्वारों का प्रमाण कहते हैं :-

अर्थ :-मध्यम अकृत्रिम जिनालय पचास योजन लम्बे, पच्चीस योजन चौड़े, साढ़े सैंतीस (३७ १/२) योजन ऊँचे और अर्ध योजन नींव से युक्त होते हैं। इनके उत्तम प्रधान द्वार की ऊँचाई आठ योजन और चौड़ाई चार योजन प्रमाण है तथा अन्य दो द्वारों की ऊँचाई चार योजन और चौड़ाई दो योजन प्रमाण होती है। ९१-९३।।

अब जघन्य जिनालयों एवं उनके द्वारों का प्रमाण बतलाते हैं-

अर्थ :-जघन्य अकृत्रिम जिनालय पच्चीस योजन लम्बे, साढ़े बारह (१२ १/२) योजन चौड़े, (१८ ३/४) योजन ऊँचे और अर्ध योजन नींव से युक्त होते हैं। इन चैत्यालयों के प्रधान द्वार चार योजन ऊँचे और दो योजन चौड़े होते हैं तथा दोनों लघुद्वार दो योजन ऊँचे और एक योजन चौड़े होते हैं। जिनागम में इन तीनों प्रकार के अकृत्रिम

एतेषामग्रिमं द्वारं स्याच्चतुर्योजनोन्नतम् ।
योजनद्वय विस्तीर्णं लघुद्वारद्वयं परम् ।।९६।।
द्वियोजनोच्छ्रितं च स्यादेकयोजन विस्तृतम् ।
अपरा वर्णना प्रोक्ता समाना श्रीजिनागमे।।९७।।
भद्रशालेषु सर्वेषु मेरूणां नन्दनेषु च।
वनेषु स्वर्विमानेषु नन्दीश्वरेषु सन्ति ये।।९८।।
उत्कृष्टायामविस्तारोत्सेधैर्युक्ता जिनालयाः।
उत्कृष्टास्ते जिनैः प्रोक्ता सर्वे पूज्या नरामरैः।।९९।।
मेरुसौमनसोद्यानेषु विश्वेषु कुलाद्रिषु।
वक्षारगजदन्तेषु चेष्वाकारनगेष्वपि।।१००।।
कुण्डले रुचकेशैले मानुषोत्तरनामनि।
ये स्युश्चैत्यालयास्तेऽत्र दीर्घाद्यैर्मध्यमा मताः।।१०१।।
ये पाण्डुकवने ते स्युर्जघन्याः श्रीजिनालयाः।
सर्वेषां विजयार्धानां जम्बूशाल्मलिशाखिनाम् ।।१०२।।
क्रोशायामाः परे कोशार्धव्यासाः प्रोन्नताः शुभाः।
क्रोशपादत्रयैर्ज्ञेया विश्वे श्रीजिनमन्दिराः।।१०३।।

जिनालयों का अवशेष वर्णन समान ही कहा गया है।। ९४-९७।।

अब तीनों प्रकार के जिनालयों की अवस्थिति का निर्धारण करते हैं :-

अर्थ :-जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा कहे हुए और मनुष्यों एवं देवों द्वारा पूज्य उत्कृष्ट जिनालय पञ्चमेरु सम्बन्धी भद्रशाल वनों और नन्दन वनों में तथा नन्दीश्वर द्वीप और वैमानिक देवों के विमानों में हैं। इनका आयाम, विस्तार एवं ऊँचाई उत्कृष्ट ही कही गई है।।९८-९९।।

पञ्चमेरु सम्बन्धी सौमनस वनों में समस्त कुलाचलों पर, वक्षार पर्वतों पर, गजदन्त पर्वतों पर, इष्वाकार पर्वतों पर, कुण्डलगिरि, रुचकगिरि और मानुषोत्तर पर्वतों पर जो जिनालय अवस्थित हैं, उनकी दीर्घता आदि का प्रमाण मध्यम माना गया है।।१००-१०१।।

पञ्चमेरु सम्बन्धी पाण्डुकवनों में जो जिनालय अवस्थित हैं, उनका व्यासादिक जघन्य प्रमाण वाला है। समस्त विजयार्धों, जम्बूवृक्षों एवं शाल्मलि वृक्षों पर स्थित जिनालय एक कोस लम्बे, अर्ध कोस चौड़े और पौन कोस ऊँचे हैं, ऐसा जानना चाहिए।।१०२-१०३।।

भावनव्यन्तरज्योतिष्कविमानेषु सन्ति ये।
चैत्यालयाश्च ते जम्बूवृक्ष चैत्यालयैः समाः।।१०४।।
अन्येषु वनसौधाद्रिपुरादिषु सुधाभुजाम् ।
भवन्ति ये जिनागारा बहवो विविधाश्च ते।।१०५।।
आयामविस्तरोत्सेधैर्बुधैर्ज्ञेया वरागमे।
यतोऽत्र सन्ति सर्वत्र जिनागारा जगत्त्रये।।१०६।।
भृङ्गारकलशादर्श - व्यञ्जनध्वजचामराः।
सुप्रतिष्ठातपत्राश्च मङ्गलद्रव्यसम्पदा।।१०७।।
प्रत्येकं हि पृथग्भूता अष्टोत्तरशतप्रमाः।
एता भवन्ति सर्वेषु जिनचैत्यालयेष्वपि।।१०८।।
ये त्रैलोक्ये स्थिताः श्रीजिनवरनिलया मेरुनन्दीश्वरेषु,
चेष्वाकारे भदन्तेषु वरकुलनगेष्वेव रूप्याचलेषु।
मान्वादौषोत्तरे कुण्डलगिरिरुचके जम्बुवृक्षेतरेषु,
वक्षारेष्वेव सर्वेष्वपि शिवगतये स्तौमि तांस्तज्जिनार्चाः।।१०९।।

अब भवनत्रिक सम्बन्धी एवं अन्य जिनालयों के साथ अष्टप्रातिहार्यों का कथन करते हैं :-

अर्थ :-भवनवासी, व्यन्तरवासी और ज्योतिष्क देवों के विमानों अर्थात् भवनों में जो चैत्यालय हैं, उनका प्रमाण जम्बूवृक्ष स्थित चैत्यालयों के प्रमाण सदृश ही है।।१०४।।

अन्य वन, प्रासाद और नगर आदि में स्थित देवों के आवास सम्बन्धी जिनालय बहुत और नाना प्रकार के हैं। इनका आयाम, विस्तार एवं उत्सेध आदि भी जिनागम में अनेक प्रकार का कहा है, जो विद्वानों के द्वारा जानने योग्य है। तीन लोक में सर्वत्र जितने भी अकृत्रिम जिनमन्दिर हैं।।१०५-१०६।।

उन समस्त जिनालयों में भृङ्गार, कलश, दर्पण, वीजना, ध्वजा, चामर, ठोना और छत्र ये अष्ट द्रव्य रूप सम्पदा पृथक्-पृथक् एक सौ आठ, एक-सौ आठ प्रमाण होते हैं अर्थात् एक-एक जाति के उपकरण एक सौ आठ एक सौ आठ (१०८×८=८६४) होते हैं।।१०७-१०८।।

अब लोकस्थ समस्त अकृत्रिम चैत्यालयों (आचार्य) को नमस्कार करते हैं :-

अर्थ :-जो तीन लोक में स्थित अर्थात् विमानवासी, भवनवासी, व्यन्तर एवं ज्योतिष्क देवों के स्थानों पर स्थित जिनालय, तथा पञ्चमेरु सम्बन्धी-भद्रशाल आदि वनों के ८०, चार इष्वाकारों के ४, बीस गजदन्तों के २०, तीस कुलाचल पर्वतों के ३०, एक सौ सत्तर

अधिकारान्त मङ्गलाचरण : -

त्रिभुवनपतिपूज्यांस्तीर्थनाथांश्च सिद्धान् ,
त्रिभुवनशिखरस्थान् पञ्चधाचारदक्षान् ।
मुनिगणपतिसूरीन् पाठकान् विश्वसाधून् ,
ह्यसमगुणसमुद्रान्नौम्यहं तद्गुणाप्त्यै[1]।।११०।।

।।समाप्तम्।।

विजयार्ध पर्वतों के १७०, एक मानुषोत्तर के ४, दश जम्बू एवं शाल्मलि वृक्षों के दश तथा अस्सी वक्षार पर्वतों के ८०, नरलोक सम्बन्धी और नन्दीश्वर द्वीप के ५२, कुण्डलगिरि के ४ और रुचकगिरि के ४, इस प्रकार मध्यलोक सम्बन्धी ४५८ जिनालय एवं उनमें स्थित जिनप्रतिमाएँ हैं उन सबकी मैं मोक्ष प्राप्ति के लिए स्तुति करता हूँ।।१०९।।

अर्थ :-त्रिभुवनपति अर्थात् शतेन्द्र पूज्य अर्हन्त परमेष्ठियों को, त्रैलोक्य शिखर पर स्थित सिद्धपरमेष्ठियों को, पञ्चाचार पालन में दक्ष ऐसे मुनि समूह के अधिपति आचार्य परमेष्ठियों को और अनुपम गुणों के समुद्र समस्त उपाध्याय एवं साधु परमेष्ठियों को मैं उनके गुणों की प्राप्ति के लिए नमस्कार करता हूँ।।११०।।

।। समाप्त ।।

-प्रशस्ति-

अकृत्रिम जिनवर भवन, जिनप्रतिमा अभिराम।
असंख्यात तिहुँलोक में, नमत मिले निजधाम।।१।।
वीर अब्द पच्चीस सौ, उनतालिस शुभ मान्य।
मगसिर सुदि पूर्णा तिथी, ग्रन्थ पूर्णता मान्य।।२।।
पूर्वाचार्यों के कथित, ग्रंथों का स्वाध्याय।
उनसे उद्धृत ग्रंथ यह, बना अतुल सुखदाय।।३।।
अकृत्रिम जिनमंदिरों, की रचना अतिशायि।
इनकी भक्ति से मिले, स्वात्म सिद्धि अतिशायि।।४।।
जब तक शाश्वत जिनभवन, शाश्वत मेरु महान्।
गणिनी ज्ञानमती ग्रथित, ग्रन्थ रहे गुणखान।।५।।

---

1. सिद्धान्तसार दीपक, पृ. 174 से 189 तक।